[Secretary]

of the Rajya Sabha be nominated to serve on the said Joint Committee:

1. Shrimati C. Ammanna Raja
2. Shri Jaisukhlal Hathi
3. Shri Akbar Ali Khan
4. Shri R. S. Khandekar
5. Shri Debabrata Mookerjee
6. Shri G. S. Pathak
7. Prof. M. Ruthnaswamy
8. Shri P. N. Sapru
9. Shri D. L. Sen Gupta
10. Shri K. K. Shah".

12.27 hrs.

MOTIONS RE: (i) FOOD SITUATION AND (ii) SITUATION ARISING OUT OF DROUGHT CONDITIONS —contd.

Mr. Speaker: We then take up further consideration of the motion on food situation. Out of 15 hours, 4 hours and 15 minutes have been spent; 10 hours and 45 minutes remain.

Shri S. M. Banerjee (Kanpur): I would like to know one thing. We are having the discussion on this motion. Will the Minister reply on the 6th?

Mr. Speaker: Yes. Shrimati Jyotsna Chanda.

Shrimati Jyotsna Chanda (Cachar): I was trying to bring to the notice of the Government that some waste lands were lying in tea garden areas and also in areas managed by the companies. I would request the Government to take steps to bring those areas under the Co-operative Societies Act and bring those lands under cultivation. I would also request the Government to penalise those companies if they do not use those lands. I also like to bring to your notice that, if the land reforms are necessary, Government should resort to them immediately without any hesitation. I also appeal to the Government that introduction of rationing for the present be made in all major cities and towns to overcome the present shortage of foodgrains. To make it successful, procurement of foodgrains should be made through State Trading and buffer stocks should be maintained in every State to meet the emergency and also to control rise in prices. Government should be more vigilant regarding their stocks. Due to improper care or negligence, foodgrains are wasted in Government godowns as it happened in West Bengal during the last monsoon time. Large quantities of foodgrains are smuggled to East Pakistan also through the borders of Assam, Tripura and West Bengal; I would request the Government to take immediate steps to stop these totally.

Fish farming should also be encouraged and increased supply of spawns should also be made through Government Fisheries at cheaper rates.

Active propaganda to change the food habits of people, especially cutting down of cereals, can be made, but at the same time it is the duty and responsibility of the Government to supply other eatable things in cheaper rates as a subsidiary food.

Government should also take strict measures against the hoarders and blackmarketeers of foodgrains. I would urge upon the Government to give priority to communication along with augmentation of foodgrains; otherwise, movement of foodgrains will suffer and a huge amount will be wasted.

A few years back, during the time of famine in the Mizo Hill District, the Assam Government had to resort to air-dropping to feed the people in that district. A huge amount of foodstuff was wasted by air-dropping. Even now, during the monsoon, foodstuffs are to be carried there and

dropped from air. In view of this, Government should pay more attention to develop those areas which still do not have proper communications with the rest of the country.

We have recently been supplied with a booklet entitled *Reorientation of Programmes of Agricultural Production* by the Food Ministry. I hope the Ministry will follow up the programme in right earnest to increase food production in the country so that we are not compelled to beg from door to door of other countries with a begging bowl and selling our conscience. At the same time, I would expect that all the Ministries will make co-ordinated effort to make the country self-sufficient. Otherwise, food production cannot be increased successfully to meet the demands of the country.

श्रीमती शशांक मंजरी (पालामऊ) : अध्यक्ष महोदय, देश के अन्दर पचासी प्रतिशत सब से ज्यादा संख्या किसानों की है। अत: अच्छे या बुरे कामों के परिणाम का असर विशेषतया उन्हीं लोगों पर पड़ता है यह निर्विवाद है।

आजादी की एक खास अवधि के बाद भी अनुभव करने पर ऐसा लगता है कि देहाती क्षेत्रों में एक मात्र कृषि व्यवसाय पर आश्रित किसान समुदाय के ही लोग हैं, जो हर स्तर पर शोषण के शिकार हैं। और शोषित होते होते आज अस्थि पंजर मात्र अवशेष के रूप में परिवर्तित होते चले जा रहे हैं। ऐसा लगता है मानो उनकी ओर कोई देखने वाला नहीं है। यह दोष किस पर मढ़ा जाए कि खेत और खलिहान में खटने वाले अन्न दाता खेतिहर वर्ग के लोग कारखाना, कचहरी, दुकानदारी, ठेकेदारी आदि में लगे लोगों की अपेक्षा दैन्यावस्था की ओर गिरते जा रहे हैं, कर्ज के बोझ से दबते जा रहे हैं। सोचा जाए, चिलचिलाती धूप, मूसलधार वर्षा के नीचे, धरती की धूल, कीचड़ में लोट पोट करते हैं। वही अन्न फल, फूल, उत्पादन करते हैं, दूध, दही मक्खन, घी, आदि उत्पादन करते हैं। सारे समाज की खुराक का सहारा देते हैं। परन्तु उन्हें ये चीजें मयस्सर नहीं होतीं।

गांवों के अन्दर कुछ थोड़े से लोगों को छोड़ कर अधिकतर किसानों की झोपड़ियां उठने के बजाय झुकती जा रही हैं। उनकी गरीबी बढ़ती जा रही है। उस पर कर्ज का बोझ बढ़ता जा रहा है, उनका जीवन कष्टमय होता जा रहा है। वे प्राकृतिक प्रकोपों के शिकार भी होते हैं। सूखा और बाढ़ दोनों से उन को ही तबाही भुगतनी है। कचहरी, दफ्तरों, विकास खंडों में जहां भी वे पांव रखें बगैर कुछ दिए उनका काम होने को नहीं। उनको अज्ञान और विवशता और आपस की फूट के कारण सभी स्तरों पर ठोकर खानी पड़ती है।

कृषि कार्यक्रम चालू है। सरकारी शासन और यंत्र मौजूद है। फिर भी महंगाई चरम सीमा छू गयी है। सरकारी खाद्यान्न बिक्री के लिए दुकानदारों को दिए जाते हैं, परन्तु बहुतेरे किसानों को वक्त पर वे प्राप्त नहीं हो पाते। चोर बाजारी में हर चीज, सीमेंट वगैरह मिल जाते हैं। परन्तु उचित मूल्य पर सही और जरूरतमन्द व्यक्तियों को नहीं मिल पाते। किरासीन तेल की कमी नहीं। फिर भी ज्यादा मूल्य चुकाए बिना वह नहीं मिलता। तस्कर व्यापार करने वालों को सामान मिल जाता है, परन्तु किसानों को दिक्कतें उठानी पड़ती हैं।

किसानों द्वारा उत्पादित सामानों की कीमत मन माने ढंग से निश्चित होती है। कभी कभी उचित से भी बहुत कम होती है। लेकिन पारिवारिक उपयोगों के लिए जब किसान व्यवसायियों के पास पहुंचते हैं तो उन्हें बाजारी में कई गुना ज्यादा दाम देना पड़ता है।

खेतिहर वर्ग कृषि उत्पादन को बढ़ाना चाहते हैं, लेकिन साधनों की कमी के कारण

[श्रीमती शशांक मंजरी]

बैसा हो नहीं पाता । शहर के मकान बनाने के हेतु सरकारी कर्ज लोगों को मिल जाते हैं, लेकिन कृषि व्यवसाय के लिए कर्ज सुलभतया और आवश्यकतानुसार नहीं मिल पाता समय पर । नतीजा यह है कि जन संख्या के वृद्धी अनुमान से उत्पादन बढ़ा नहीं है ।

कृषि के सर्वाधिक महत्वपूर्ण काम खेतिहर मजदूरों के द्वारा सम्पादित होते हैं, लेकिन उनकी हालत अभी दयनीय है । किसानों की इस स्थिति की ओर सरकार का तथा कांग्रेस जैसी संस्थाओं का ध्यान तो जाना ही चाहिए, क्योंकि सारे समाज का श्रेय उन्हीं को प्राप्त है ।

बहुत अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि विदेशों के भरोसे में जिन्दगी पालने वाली हमारी सरकार को अब मालूम पड़ा । अब छटपटी हो रही है अन्न उत्पादन के लिए । गमले में गाछ लगाओ, रास्ते में गाछ लगाओ यह कहा जा रहा है । जब राष्ट्रपति भवन के बगीचे में उत्पादन किया जा रहा है तो जितने मिनिस्टर और एम पी हैं उन सब के लान अभी तक क्यों खाली हैं । कुछ भी करें, जब तक घूसखोरी और स्वार्थ नहीं हटेगा, तब तक चाहे गमलों में भी अनाज पैदा हो जाए, फिर भी अनाज की पूर्ति नहीं होगी ।

रेडियो में और अखबारों में, हर एक जगह में भाषण दिए जा रहे हैं कृषि और खाद्य का उत्पादन बढ़ाने के विषय में । कैसे अन्न उत्पादन में वृद्धि हो यही खयाल पहले होना चाहिए था, जो अभी कहा जा रहा है । यह सरकार की गलती है । मेरा कहना है कि, इधर तो लड़ाई का आगमन है, उधर अकाल की भंयकर स्थिति । ऐसी हालत में तुरन्त कृषि का सुधार होना मुश्किल है । इस साल हर जगह वर्षा ठीक समय पर न होने के कारण अनाजों में भारी क्षति पहुंची है । कहां तो सूखा है, जहां पानी की सुविधा है, वहां विहन का अभाव है । रुपये का अभाव है । जहां नल कूप बने हैं वे कहीं कहीं जगह जगह टूट गए हैं । सूखा पड़ा है । जहां पानी की व्यवस्था नहीं, वहां सूखा है, आदमियों को पानी पीने के लिये मिलना मुश्किल हो गया है । ऐसी हालत में इतनी भारी जनसंख्या के लिए अन्न की पूर्ति कैसे हो सकती है । सुधार तो पहले करना था । अपने देश की दयनीय दशा पर तो उस वक्त ध्यान भी नहीं दिया गया । विदेशों से भारी संख्या में मशी वगैरह मंगाई जाने लगी जिसके ऋण का बोझ मालूम नहीं किस जिन्दगी में वसूल होगा ।

मंत्रियों के लेक्चर से अनाज पैदा होने वाला नहीं है । इस में वास्तविकता की आवश्यकता है । हां, यह होगा कि अपना फर्ज सरकार बता देगी कि हम ने तो कहा कठिन परिश्रम कर के ज्यादा से ज्यादा अन्न उत्पादन करो और सोमवार को व्रत करो । कहीं कहते हैं कि मंगलवार को हनुमान जी का व्रत करो । बिहार के आर्यवर्त में तो महीने में तीन दिन निर्जल उपवास करने के लिए कहा गया है । इस साल तो किसी तरह से काम चल ही रहा है । आने वाले साल--1966--में मालूम नहीं, क्या गुज़रेगी । उस वक्त भी यही कहा जायेगा कि एक हफ़ता खाओ और एक हफ़ता व्रत रखो। तभी अन्न की पूर्ति हो पायेगी ।

हमारी सरकार को शांति प्रिय है । सन्यासियों और जोगियों को भी शान्ति प्रिय है । लेकिन संन्यासी और जोगी दूसरे के आश्रय पर जिन्दगी गुज़ारते हैं, मांग कर खाते हैं । यही हाल हमारी सरकार का भी है । 1962 में हरेक से सब चीजें मांगनी पड़ीं । अस्त्र-शस्त्र भी विदेशों से मांगने पड़े । आज 1965 में भी वही हालत है ।

अब जब कि देश में राशन होने की बात हो रही है, तो अमीरों और मालदारों ने साल

भर का राशन भर कर रख लिया है । इसलिए राशनिंग से अमीरों को क्या कमी आ सकती है ? राशनिंग हो या न हो, अमीरों का तो कुछ नहीं बिगड़ेगा । इसका प्रभाव तो गरीबों पर पड़ेगा । उस समय यह कहा जायेगा कि बारह औंस की जगह आठ औंस खाओ । बेचारे गरीब परिवार के लोग तो मारे जायेंगे, लेकिन अमीरों की दावतें और पार्टियां चलती रहेंगी ।

जब जनता को पेट भर खाने को नहीं मिलेगा, तो लोग परिश्रम कैसे करेंगे ? उस वक्त शांति-शांति कहने से काम नहीं चलेगा उस वक्त चोरी, डाका, लूट-मार, घूसखोरी सब बढ़ जायेंगे ।

इसलिए मेरा कहना है कि अमरीका से पी० एल० 480 के अन्तर्गत जो अनाज मिल रहा है, उसको ले लेना चाहिए । राजनीतिक शर्त पर अन्न न सही, कर्ज के रूप रूप में ही ले लिया जाये । कर्ज तो पहले ही सिर पर है । एक और कर्ज सही । इस प्रकार 1966 का वर्ष तो गुजर जायेगा, बाद में ईश्वर मालिक होगा ।

श्री ब्रज बिहारी महरोत्रा (बिल्होर): अध्यक्ष महोदय, लोक सभा के प्रत्येक अधिवेशन में खाद्य स्थिति पर चर्चा होती है । इस अधिवेशन में भी कल से इस विषय पर चर्चा चल रही है । यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि हमारे देश में इस बार ठीक से वर्षा नहीं हुई है । जिसका नतीजा यह है कि ख़रीफ़ की फ़सल की सम्भावनायें बिल्कुल निराशाजनक हैं, पिछली रबी की फ़सल जितनी अच्छी हुई थी, उस से हम को थोड़ा संतोष हो गया था, लेकिन उसके बाद वर्षा न होने के कारण ख़रीफ़ की फ़सल एक-चौथाई भी होने की आशा नहीं है । जो थोड़ा बहुत धान और मक्की आदि हुए हैं, वे नाकाफ़ी हैं । रबी का एरिया बढ़ गया है । लेकिन बरसात न होने के कारण रबी के आसार नजर नहीं आ रहे हैं । इस बारे में मंत्री महोदय ने जिस बात की तरफ़ संकेत किया है, उस पर हमें ग़ौर करना चाहिए ।

सरकार ने इस मसले पर कभी भी गम्भीरता के साथ और दूर की पालिसी बना कर विचार नहीं किया है । अगर उसने कृषि उद्योग को प्राथमिकता दी होती, तो हम निश्चित रूप से इस मुसीबत को टाल सकते थे और इस समस्या को हल कर सकते थे, ख़ास तौर पर इसलिए कि पिछले इतने वर्षों से हमारे देश में कांग्रेस का शासन रहा है । लेकिन आज भी हमारा वही नजरिया है कि हम दूसरे लोगों के सहारे इस मसले को हल करना चाहते हैं । आज भी हम कृषि की उपज बढ़ाने के लिए फ़र्टीलाइजर—और वह फ़र्टीलाइजर, जो किसी फैक्टरी, से निकले—पर निर्भर करना चाहते हैं । हमारे देश में इतनी बड़ी मात्रा में जो फ़र्टीलाइजर चूल्हे में झोंक दिया जाता है, उसको काम में लाने के लिए कोई इन्तजाम नहीं किया गया है । आज तक गोबर गैस के प्लांट बना कर खाना बनाने की समस्या को हल करने का कोई उपाय नहीं सोचा गया है और न ही यह सोचा गया है कि कैसे गोबर का उपयोग करके कृषि का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है ।

कैमिकल फ़र्टीलाइजर जरूर एक अच्छा उर्वरक है, लेकिन उसके लिए पानी का होना आवश्यक है । अगर पानी उपलब्ध नहीं है, तो यह उर्वरक तो खेत के लिए ज़हर हो जाता है, फ़सल के लिए ज़हर हो जाता है । आज पानी की यह हालत है कि न भगवान पानी देते हैं और न नहर से पानी मिलता है । गंगा नहर का जो रोस्टर मिला है, उससे मालूम होता है कि महीने में केवल एक हफ़्ता पानी दिया जायेगा । क्या केवल एक हफ़्ते पानी देकर रबी को बचाया जा सकता है ? मैं नहीं समझता हूं कि इससे रबी बचेगी । फिर पानी पूरी पनसाल में नहीं दिया जाता है ।

[श्री बज बिहारी मेहरोत्रा]

दूसरी कठिनाई यह है कि यहां पर तो कृषि मंत्री और खाद्य मंत्री एक हैं। लेकिन राज्यों में कृषि मंत्री अलग हैं, खाद्य मंत्री अलग हैं, सिंचाई मंत्री अलग हैं और उनमें इस बारे में कोई सामंजस्य नहीं है कि किस तरह पानी कृषि-उत्पादन के लिए किसान को मौके पर मिल सके।

किसान को जरूरत होने पर पैसा भी नहीं मिलता है और जब तक किसान को वक्त पर सस्ते ब्याज पर कर्जा नहीं मिलता है, तब तक कृषि के उत्पादन में कोई सफलता नहीं मिल सकती है। बड़े-बड़े सम्पत्ति वाले लोगों को, बड़े-बड़े धनिकों को, खाद्य का उत्पादन करने के लिए बिजली, पानी, मशीनें और मशीनों को मंगाने के लिए फ़ारेन एक्सचेंज आदि सब साधन दिये जाते हैं, तो फिर किसानों ने क्या अपराध किया है कि उन्हें वक्त पर सस्ते ब्याज पर पैसा नहीं मिलता ? मेरा विश्वास है कि अगर हमारे छोटे-छोटे किसानों को वक्त पर सस्ते ब्याज पर रुपया मिले, पानी मिले, बीज मिले और जो खाद बर्बाद होती है, उसको बचाने का इन्तजाम किया जाये, तो वे लोग अपने खेतों में दो-दो, तीन-तीन फ़सलें, पैदा कर सकते हैं।

हमारे बड़े-बड़े शहरों को अन्न चाहिये। अन्न वहां पहुंचता है और उस के लिए सरकार राशनिंग की व्यवस्था कर रही है। लेकिन मैं जानता हूं कि ऐसे शहर भी हैं, जहां सियुअर से निकलने वाला मल-मूत्र खेतों में न जा कर गंगा, जमुना आदि नदियों में डाला जाता है।

12.48 hrs.

[MR. DEPUTY-SPEAKER *in the Chair*]

अब देहात में भी यह हालत हो गई है कि सैप्टिक टैंक बना कर वहां भी मल-मूत्र बर्बाद किया जा रहा है और वह खेतों में नहीं जाता है। मेरी समझ में नहीं आता है कि हमारे देश में आज यह क्या हो रहा है। एक तरफ तो हम फ़ूडलाइजर के मोहताज हैं और दूसरी तरफ फ़र्टिलिटी के जितने साधन हैं, वे सब बर्बाद किये जा रहे हैं। मैं मंत्री महोदय का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहता हूं और चाहता हूं कि वह कृषि के विशेषज्ञों से इस बारे में परामर्श करके कोई रास्ता निकालें।

यह जरूरी नहीं है कि हम खाने के लिए केवल अन्न पर ही निर्भर रहें। हमें बड़ी आसानी से मुर्गी-पालन, पिग्गरी और मत्स्य-पालन को प्रोत्साहन दे कर दूसरी चीजों का उत्पादन भी बढ़ा सकते हैं। हम में से जो लोग आमिषभोजी हैं, वे इन चीजों से अपने खाने को सप्लीमेंट करके अपने हिस्से का कुछ अंश बचा सकते हैं।

माननीय खाद्य मंत्री जी ने यह नारा दिया है कि सप्ताह में एक बार खाना न खाया जाये। यह नारा बहुत अच्छा है, लेकिन यह केवल उन सफ़ेदपोशों के लिए है, जो दोनों वक्त खाना खाते हैं और अच्छा खाना खाते हैं। लेकिन हमारे देश की 87 फ़ीसदी आबादी देहातों में रहती है और देहात में बहुत से घर ऐसे हैं, जिनमें दो वक्त खाना नहीं बनता है। कल माननीय सदस्य, श्री गहमरी, ने ठीक ही कहा था कि देहात में बहुत से घर ऐसे हैं, जहां एक ही वक्त खाना बनता है। मैं इन समस्याओं की ओर मंत्री महोदय का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। किसानों की जो जरूरी मांग है वे पानी की है। अगर पानी की व्यवस्था ठीक से हो जाए तो यह जो अन्न की कमी हमें दिखाई देती है यह बहुत हद तक पूरी हो सकती है। इस कमी को हम बहुत आसानी से पूरा कर सकते हैं। आप कहते हैं कि दस फ़ीसदी की कमी है। लेकिन यह कमी ऐसी नहीं है जोकि पूरी ही न की जा सकती हो। मैं आपको अपने क्षेत्र की बात बतलाता हूं। वहां पर गंगा की नहर

जाती है । उसका पानी मेरे इलाके को लगता है । अगर वक्त पर पानी मिल जाता है तो सचमुच दो दो और तीन तीन फसलें वहां पर लोग कर लेते हैं । अगर पानी समय पर दे दिया जाए और जितने पानी की आवश्यकता हो उतना दे दिया जाए तो तीन तीन फसलें करना मुश्किल नहीं होना चाहिये । सरकार को चाहिये कि वह कुएं खुदवा कर पानी की व्यवस्था कर दें । अगर पानी के लिए बड़े बड़े बांधों पर ही निर्भर रहे तो इससे काम चल नहीं सकता है, इससे जितनी आपकी समस्या है वह शीघ्रहल होने वाली नहीं है । आपको चाहिये कि आप पक्के कुंए बनवा कर उनके लिए बिजली की व्यवस्था कर दें । तब यह जो समस्या है इसका समाधान बहुत आसान हो जाएगा ।

इन कुओं के लिए आपको चाहिए कि आप बिजली भी दें । देहातों में बिजली दी तो जा रही है लेकिन बहुत धीरे धीरे दी जा जाती है । वहां तेजी से बिजली पहुंचाई जानी चाहिये । कंसलटेटिव कमेटी में मैंने इस प्रश्न को उठाया था । मैंने माननीय बिजली मंत्री से कहा था कि देहातों में बिजली पहुंचाने की व्यवस्था की जाए । इससे न केवल वहां उद्योग धंधे स्थापित होने में सहायता मिलेगी वरन् कृषि उद्योग में भी सहायता मिलेगी और अन्न की पैदावार बढ़ सकेगी । उन्होंने इसके उत्तर में यह कहा कि देहात के लोग पैसा दें तो ऐसा किया जा सकता है । इसके लिए उन्होंने अलग से पैसे की मांग की । अब आप देखें कि जब देहात के लोगों को बिजली देने की बात आती है तो अलग से उन से पैसा देने की मांग की जाती है लेकिन शहर वालों को जब बिजली देने की बात आती है तो कोई अलग से पैसे की मांग नहीं की जाती है और उनको बिजली सस्ती भी दी जाती है । यह दो तरह की नजर क्यों ? ऐसा भेदभाव क्यों ? शहरों को तो आप एक दृष्टि से देखते हैं लेकिन देहातों को दूसरी ही दृष्टि से देखते हैं । शहर वालों के लिए एक तरह का बरताव और गांव वालों के लिए दूसरी तरह का बरताव, यह तो अच्छी बात नहीं है । उसी तरह से बिजली के रेट की बात है । शहरों में लगे हुए उद्योग धंधों को सस्ती बिजली दी जाती है जबकि देहातों में कृषि उद्योग के लिए सस्ती बिजली की जब मांग होती है तो कहते हैं कि उस मांग को पूरा नहीं कर सकते हैं । भगवान के नाम पर सोचें कि सस्ती बिजली किसे देनी चाहिए । जो पैसा विदेशों से अन्न मंगाने पर खर्च करते है अगरवह पैसा अनुदान देने में खर्च करें, बिजली सस्ती देने में खर्च करें तो मैं समझता हूं कि अन्न की समस्या हल हो सकती है । बिजली की उपलब्धि बढ़ती जा रही है, यह सही है । लेकिन गांवों में बिजली धीरे धीरे पहुंच रही है । निज के जो कुंए लगाते हैं उनके लिए भी बिजली देने की व्यवस्था करनी चाहिये और सस्ती दरों पर देने की व्यवस्था करनी चाहिये । मैंने पता लगाया है और मुझे पता चला है कि केन्द्र के जो सिंचाई मंत्री हैं उनके हाथ में बिजली तो है लेकिन ट्यूबवैल उनके हाथ में नहीं हैं । यह क्या मजाक है, समझ में नहीं आता है । किन्हीं राज्यों में बिजली एक के हाथ में और पानी किसी दूसरे के हाथ में । जिन के हाथ में पानी है वे पानी भी वक्त पर नहीं पहुंचाते हैं । इस तरह की जो शिकायतें हैं इन की तरफ सरकार का ध्यान जाना चाहिये । अगर इन बातों की तरफ ध्यान नहीं दिया जाएगा तो जो शिकायतें हैं वे बनी रहेंगी और यहां पर इस विषय पर बहस का क्रम इस तरह से चलता रहेगा और यह जो समस्या है, यह हल नहीं होगी । इसका अगर आप चाहते हैं कि कोई हल निकले तो उसका उपाय यह है कि इन सारी बातों पर आप गौर करें और गौर करने के बाद कोई रास्ता निकालें ताकि कृषि के उत्पादन को बढ़ाने के लिए जिन साधनों की आवश्यकता है उनकी पूर्ति हो सके । आपको देखना होगा कि किस तरह से गोबर का हम खाद के लिए इस्तेमाल कर सकते है, खेतों में पानी पहुंचाने की और समय पर पहुंचाने की किस प्रकार से व्यवस्था की जा सकती है,

[श्री ब्रज बिहारी मेहरोत्रा]

हरी खाद किस तरह से पैदा की जा सकती है ताकि कृषि में उसका उपयोग करके उत्पादन को बढ़ाया जा सके। अगर हम ऐसा कर दें तो हमें फर्टिलाइजर के लिए अपनी फैक्ट्रीज पर या विदेशों पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा, उनका मुहताज नहीं होना पड़ेगा। अगर हम इसके लिए अपनी फैक्ट्रीज या विदेशों पर निर्भर रहेंगे तो सारी की सारी हमारी समस्या वैसी की वैसी बनी रहेगी।

कृषि बरबाद करने वाले जो जन्तु हैं, उन से भी हमें कृषि की रक्षा करनी चाहिये। चूहे बढ़ रहे हैं, चिड़ियों का हमला होता रहता है, नीलगाय, बन्दर और सूअर इत्यादि फसलों को बरबाद करते रहते हैं। इन से आपको चाहिये कि आप फसलों की रक्षा करने की व्यवस्था करें। बन संरक्षण योजना आपने लागू कर रखी है, बनों का संरक्षण तो आपने कर रखा है लेकिन उसके साथ साथ आप यह भी देखें कि आपने उन बनों में डाकू और सूअर पाल रखे हैं जो खेतों को खराब किया करते हैं।

गांवों में तालाबों की व्यवस्था भी आप करें। वहां पर मत्स्य पालन भी हो सकता है और सिंचाई के काम में भी उसका पानी आ सकता है। मछली उद्योग को भी आपको प्रोत्साहन देना चाहिये। गहरे समुद्र में मछलियां पकड़ने का भी इंतजाम होना चाहिये। ये सब चीजें हमें खाद्य की समस्या को हल करने में सहायता दे सकती हैं।

इन शब्दों के साथ मैं प्रार्थना करता हूं कि आपको अपने प्रयासों में कामयाबी मिले और जो आशा आपने की है वह आशा आपकी पूर्ण हो।

Shri Dinen Bhattacharya (Serampore): Two have spoken from the other side. When will we get a chance?

Mr. Deputy-Speaker: Only one has spoken.

Shri Veerappa Gowda (Bangalore): I am very happy that the Food Minister has made a very practical statement in the House yesterday. He has taken a realistic view of the conditions prevailing in the country with regard to this important matter.

While appreciating the statement for being practical and useful and for comprising ideas and suggestions about this matter, I want to express the view that unless these useful suggestions are translated into action, they will remain only a pious hope. These ideas and suggestions have been before the country all these years. Statements have been issued and Ministers have made speeches about this matter, but in my experience these things have not been implemented as yet.

Recently I had an opportunity of touring the greater part of my constituency and personally found the harrowing conditions facing the people in those areas. People have no food to eat, no water to drink, the cattle have no fodder. People are wandering to search of food and work. In the rural areas the people are poor, but they are a very proud people; they would rather starve than beg for food. So, they are leaving their houses, abandoning even their women and children to shift for themselves, in search of food and work. Wherever they go, there is no work.

The Mysore Government is doing its best by way of providing work for these people, but what they are attempting to do is only a drop in the ocean. They have sanctioned about a couple of lakhs of rupees for each district, whereas they require at least a couple of crores for each district. Therefore, the request of the Mysore Government to sanction Rs. 20 crores to provide adequate work for these people should be immediately granted. I was happy to read in the note that was distributed to the Members of the House that the Union Government was sympathetically considering the request of the Mysore Government.

With regard to food, the fair price shops and co-operative societies are not adequately supplied, so that all people who need the rations could got them. Therefore, immediate attempts should be made to rush whatever food is available to Mysore, so that the difficulties may be got over.

13 hrs.

With regard to cattle, even now one can see in the evenings hundreds and thousands of cattle being driven on the roads in search of fodder. Cattle are sold very cheap. A pair of bullocks which would cost about Rs. 400 to Rs. 500 is now available for less than Rs. 200. Goats and sheep also have become very cheap. A goat or a sheep which would cost Rs. 40 to Rs. 50 is now available for Rs. 10 to Rs. 15. Mutton which used to cost Rs. 4 to Rs. 5 per Kg. is now available for Rs. 2 or even less. Such is the condition. In some of the villages I was told that the cattle are being driven out of the houses, so that the people may not see their cattle die before their very eyes for want of fodder. Therefore, I was surprised to read in the note that is supplied to the Members of the House that no State Government has asked for fodder. I really wonder why the Mysore Government is silent about this matter, for in Mysore thousands of cattle are on the verge of starvation, are being sold, and goat and sheep are being killed for food. Therefore, I would request the Government to arrange for supply of fodder also to Mysore State. This selling of cattle at cheap rates and the killing of goats and sheep will confront the ryots with a grave situation in the near future; when the rains fall there would be no cattle to plough and there would not be any sheep or goat so that we could get some manure for the fields. The middle class ryots were encouraged to mechanise their farming methods, and some people have been trying to buy small tractors. The tractors manufactured in various foreign countries are very costly. We would not get one for less than Rs. 15,000 to Rs. 30,000. But the Russian tractors cost a little less. A 14 h.p. Russian tractor costs about Rs. 6,000 and a smaller one will cost about Rs. 4,000. I am told—I do not know whether it is a fact—that the dealers of Russian Tractors in India are asked to add Rs. 4,000 more per Russian tractor and keep that amount in a separate account and submit monthly accounts to the State Trading Corporation, and that amount is meant—that is what I am told—to subsidise the indigenous manufacturers of tractors. Now, the tractor which I could get for about Rs. 6,000 would cost about Rs. 10,000 now, and that is to help the local manufacturer of tractors. It is not a correct policy, that these people should be burdened with another Rs. 4,000 extra. You know, Sir, there is a Kannada proverb which when translated means "kill the snake to feed the vulture,". Thas is what is going to happen if this sum of Rs. 4,000 is added to the price of each Russian tractor. As I said, I do not know whether it is a fact; if it is not a fact, I shall be very happy. But, if it is a fact, I request the Government to look into the matter and see that in the name of helping the indigenous manufacturer, the middle class ryots are not taxed heavily.

The Mysore Government have recently passed an order that the D.Cs. are empowered to decide and ryots which crop they should raise on their fields. In the absence of a crop planting law, this will harass the people to a great extent. That is my experience because there are D.Cs. and D.Cs.; some of them may not know exactly what is agricultural science. In their own way they may ask the people to raise a crop which is not suitable for that particular land. Why I say this is, very recently, a coordinating officer at the State level did not believe that a well on an empty tank-bed or on the side of a river could be dug within three or four months. According to him, it would take about two to three years, and the cost would come to about Rs. 5,000. An experienced agricultur-

[Shri Veeranna Gowth]

lat or a man in the rural areas knows that these temporary mud wells, 10 to 15 feet deep, could be dug within 20 days or in a month or two and at not more than a cost of Rs. 500. I say this because these inexperienced officers who do not know the rural life, who do not know the agricultural conditions, are called upon to advise the people. I therefore suggest that the only experienced officers should be entrusted with such programmes of work.

There is an army of workers in the rural areas. The officers belonging to the co-operative department, the agricultural department, the development department, and officers such as the B.D.Os. and others. According to my knowledge and experience, these officials are doing precious little in the matter of practically assisting the ryots and rendering them help. These officers, such as the B.D.Os. and others are moving about in the villages in jeeps supplied by Government and it is universally said in the rural parts that instead of calling them B.D.Os., they could be called cigarette, because they only smoke cigarettes and move about and they are not in touch at all with the rural folk.

13·05 hrs.

[SHRIMATI RENU CHAKRAVARTTY *in the* Chair]

I would urge upon the Government to whip up these people and ask them to get into touch with the rural folk and enter their fields and take them into their confidence and suggest to them ways and means of getting over the present difficulties; especially the programme that has been placed by the Food Minister before this House has to be tackled in all seriousness.

Shri Alvares (Panjim): Mr. Chairman, for the last many years the Government has been seeking shelter behind the caprice of the Indian monsoon. It is an obvious fact that India is always a deficit country with respect to food, even though the failure of a particular monsoon may aggravate the situation. There are other countries that suffer from the vagaries of the monsoon such as India does, but in the course of years, they have worked to ensure themselves against this possibility and have seen that food does not depend so much upon natural resources as upon man-made insurance. The paradox, however, is that the more developed countries have a better production of food supply than the under-developed countries. In the conference that the Food Minister attended last week in Rome, Mr. Sen, the Director-General of the FAO, has drawn attention to the low production of under-developed countries, which has gone down by 25 per cent. This is the malady that under-developed countries suffer from and it is not peculiar to India. In all under-developed countries, which have seen colonial rule through more developed countries, there is always a residue of a colonial mind, namely, that industrialisation must take precedence over agricultural production. In all such countries such as Russia, Yugoslavia, India and China, agricultural production has suffered because of the high priority and predominance given to industrial production. It is only at a later stage, because of the fact of food shortages, that men like Khrushchev in Russia and Tito in Yugoslavia have reversed the process of priorities and started giving attention to agricultural production. Our planners did not take the lesson of history and the result is that we depend so much upon the monsoon. We depend so much upon more industrial production that the rural sectors of the economy are left entirely neglected. That is the reason why the failure of an agricultural policy primarily brings about a repetitive occur-

rence of food shortages. I am sure that if a policy was evolved by which large tracts could be carefully nurtured, for instance, with the availability of water-supply, of making available good fertilisers, with a real price-policy, and an agricultural social arrangement, we would have been able to get over these repeated shortages and India could be well on the road to self-sufficiency.

The first essential, I would say, is to come out with a national food budget, showing how much there is, how much do we require. At the present moment, the ration of 12 ounces is proposed to be increased to 16·3 ounces in 1970-71. Whenever this Government is in a difficulty, it always holds out the prospect of what we will get five years hence, neglecting the situation that is facing us today. I am sure, Madam Chairman, that the Indian people, and this House, will not be taken in by such promises. We have to know what the position is today so that we can draw up a national food budget for the moment, that is today, and in relation to the national food budget we can also arrange a national agricultural market. Unless there is a uniform agricultural market in this country, whatever you try to do will not be possible, because these two are inter-related concepts, a national food budget and a national agricultural market, so that one works in conjunction with the other.

The Food Minister, yesterday, when speaking on his motion, said that the deficit would be in the nature of 8 million tons. Now, as I say that this deficit is comparable to normal deficits, even when the monsoon is rather favourable, I want to know from the Food Minister what he proposes to do to work out in the next few years a national food budget so that we are able to find out what are the necessary inputs that we have to invest, and what are the outputs that will come about, and on the composition of these various composites of inputs and outputs we have to find out what he thinks about them.

Let us take the question of water. Many years ago when Albert Einstein was asked his opinion about the atom bomb and the dangers inherent in it, he said he was not so much worried about the devastating effects of the atom bomb because man was too selfish to destroy himself, but he said that a real danger came from the receding water table. The receding water table is receiving the attention of the scientists. In India the experience is there. It is evident from the fact that we are looking to deepen the wells that have been dug. We want to energise the tubewells. This receding water table, for some reason or the other, has not occupied the attention of the Government. Rather than depend upon the monsoon and the dams for consequent irrigation, the Government should make us independent of the monsoon by a programme of having one tubewell at least in every village. The monsoon has its vagaries. These vagaries are further dependent upon the storage of water for hydel purposes. If monsoon fails, not only do irrigation facilities fail, but also the dependency upon power is limited so much. Can we not arrange a programme by which this country while accepting the blessing of a good monsoon is independent of it? The Minister of Irrigation and Power, fortunately, is here. He knows, as well as others do, that this phenomenon of a receding water table will harass this country as it is harassing other countries. Therefore, we must pay attention to water. Without the input of water, which is the most important, there cannot be any agricultural production. Therefore, the first point, they must evolve a firm policy about, is the question of water. Water must be supplied cheaply, water must be supplied in abundance, and unless the Government evolve a policy of independence of water, free from the abundance or the vagaries of the monsoon, agricultural production can never be assured.

The next point is the question of fertilisers. The story of fertiliser is that whereas India uses one pound of

[Shri Alvares]

fertiliser per unit Japan uses 20 pounds of fertiliser. Japan uses 20 times as much as India and therefore, naturally, Japan is able to produce so much of crops per year on one acre of land.

This brings me to the controversy of whether to extend the area of cultivation or to limit it to intensive cultivation. The world average is 12 per cent of the total area of the land for cultivation. That is supposed to be the optimum. Japan has 15 per cent of the total area under cultivation. In contrast, India has 45 per cent of the total area under cultivation. One can, therefore, draw the conclusion that whatever we put in in the form of fertiliser and water, there is such a dissipation of resources, such a dissipation of inputs, that we are not able to get out the maximum out of the land. There is also a controversy raging and there has been a discussion on this issue, whether to bring in more area under cultivation. I am opposed to this suggestion. Already we have three times the world average. If 15 per cent of the total area under crop is considered the optimum taking into consideration the number of inputs—fertilisers, water etc.—I am sure we shall opt for a more intensive form of cultivation where in selected areas Government can produce crops which will have a high-yield potential than in other diversified or extensive forms of cultivation.

There is a third and very important input, and that is an agricultural arrangement as far as the peasant is concerned. The issue of agriculture is important. Whatever incentives are given to industry, they affect only a small section of our community. The agricultural sector covers more than 50 per cent of our population, more than 60 per cent of our national income. Neglect of the agricultural sector would mean neglect of 60 per cent of our total income. Therefore, no national income, no per capita income, can increase so long as the Government does not pay prior attention to the agricultural sector. We talk of economic growth. The Government calculates economic growth merely on industrial growth. If more than 50 per cent of the population contribute to more than 60 per cent of the national income of our country, it is obvious that these 50 per cent of the population are tied down by a neglect of the agricultural policy, and the sooner the Government pays attention to it the better. Reference has been made to the tardy land reforms taking place. Social stagnation naturally results because of this slow process of re-arrangement of our social economy. Therefore, if this third input—the first being water and the second being fertiliser—of re-arrangement of the agricultural pattern is there, I am sure the other desiderata can be taken care of.

Let me now think of the fourth one, the question of prices. Price is very important. Here, in India, we have neglected it. We have a paradoxical situation where extra production puts the producer in a difficulty because he does not get the fair prices, while if there is a short supply according to the market mechanism the prices should rise and he is still in the same position because none of the conditions of a market mechanism reach him or benefit him. In progressive countries, in Europe, the Government takes care of such a situation. In England, in America, in Japan, and other countries where the market mechanism works, the Government either subsidise food or it helps the agriculturists by giving them support prices. President de Gaulle is prepared to risk the entire future of the European Economic Community just because he wants a higher price for his agricultural products. If an industrial nation can pay so much attention and devote so much anxious concern to the future of agricultural economy, it is obviously necessary for this Government to make more efforts.

We have the report of the expert committee that met at Vijayanagar somewhere late last month to decide about this question of support prices. They have recommended three prices—minimum support price, purchase price and market price. So long as you accept the theory of the market mechanism that determine the purchase price and the selling price, it is all right. But we have the experience of a market mechanism and that plays havoc into our economy, food as well as production. Therefore, I would not agree that these three prices should be there. At the most I may suggest that the minimum support price and the purchase price should be combined into one, and a market price should be accepted separately. Shri Pai has stated in a statement released in Bangalore that he would like India to adopt the Japanese method of monopoly procurement. If you have, as it was originally intended, a policy whereby the Food Corporation would adopt a policy of monopoly procurement as in Japan, the range of three prices, the minimum support price, the purchase price and the market price would be irrelevant because one agency would purchase the entire stock that is brought into the market. In order to prove this we have the experience of how the prices fluctuated in the last four months. In spite of the bumper crop last year, the stocks did not go into the market because of anticipation of higher prices; when the policy was announced by Government that they would procure foodgrains and introduce rationing, in a situation like that where the prices should have gone up to a high degree, the prices actually had not shot up as they should have. The statistics supplied by the Government of India have proved that prices have risen but with a certain amount of restraint. This phenomenon, this paradox, is only explained by the fact that hoarders take advantage of situations, hoping to profit thereby at a more favourable opportunity. And when they see that this opportunity will not be available because of the monopoly procurement policy of Government, stocks are released in the market at prices which are lower than that could be anticipated. This only goes to prove that the three tier policy of minimum support price, purchase price and a marketable price is unnecessary in this country. If the Government wants, they could have a support price. Therefore, I would again refer to the statement made by Shri Pai where he says that the policy of the Food Corporation is hamstrung in this respect, because the function of the Food Corporation is intimately linked with the question of prices. Shri Pai says that the Corporation was not allowed to function even as an ordinary trader in some States. He has stated:

> "The concept of a food procurement and marketing organisation had not gained the approval of these States but he had been able to convince some of them about the utility of the Corporation in a limited field."

While speaking on the debate on the Food Corporation Bill I had stated right at the beginning that though the setting up of the Food Corporation was a welcome venture it has been hamstrung and not allowed to play its part effectively. The Chairman of the Food Corporation of India is corroborating what I said some six months ago. The statement says:

> "Mr. Pai, who envisaged the total turnover of the Corporation this year to exceed Rs. 250 crores conceded that the figure could have been higher if only the Corporation did not continuously face 'a problem of attitudes in many States'."

That is the crux of the problem. How can you have a price policy unless you have a unified agency? If you have two or three parallel agencies, it is obivious that the prices could not be controlled and some of the States, like every private trader, will try to take advantage of this situation.

[Shri Alvares]

Let us look at what Government has done in the range of prices for sugarcane. This is an example how the Government, while not interested in giving a support price to the grower, is very anxious to give a certain support price to the sugar industrialists. During the last five years the Government has given a subsidy of something like Rs. 34.46 crores for the export of sugar. I have not come across any instance in which this Government has shown such an anxiety on behalf of the grower. The growers have been asking for a better price but, in spite of this, in order to be able to earn a certain amount of foreign exchange, the Government has given a subsidy to the sugar industry for the last six years of Rs. 34.46 crores. Again, if you look at the imports under PL 480, which unfortunately are very necessary today at a time of food crisis, though we must look ahead to a period of self-sufficiency, Government has poured Rs. 927 crores into the pockets of the American farmer. What portion of this money represents the real purchase price there I do not know. Everybody knows that the American Government gives support price to the American farmer. If a portion of this Rs. 927 crores paid to the American Government under PL 480 funds alone could have been given as inrentives to the Indian farmers, I am sure the picture of agricultural production in India would have been different.

There are just two points that I will refer to before I conclude. One is the question of distribution. As important as production, as important as price support is the question of distribution. These are such interrelated problems that it is not possible to discuss them absolutely in isolation. The distributive process in the country is in the hands of the traders and they hold up stocks. Therefore, if we have monopoly prorurement, if we take the stocks away from the millers who are the normal channels through which the private traders buy their grains, I am sure that the distributive process can also be controlled by the Government There is no point in giving support price, there is no point in monopoly procurement if we leave the distributive process entirely in the hands of the big distributors. Therefore, I would favour the system by which the Government having secured monopoly procurement, to the extent it is possible, should be able to leave the distributive process, as far as retail distribution is concerned, in the hands of the retail trade. It is not possible for the Government machinery to undertake the distributive process at the retail level. Therefore, I would suggest that, as far as retail distribution is concerned, Government should use the existing machinery that is there, including the progressive role of the co-operatives in order to bring about this distributive process.

Finally, I would like to say this. The Agricultural Prices Commission has warned us that we shall have to live with the difficulty of food for the next ten years. Ten years is a long period. Within ten years, as somebody said this morning, there is going to be malnutrition, there is going to be slow starvation and our defence potential will naturally be affected and we shall not be able to do what the people expect of us. The jawans have done a good job on the front and we must do an equally good job on the home front. And of all the jobs that we can, the responsibility on the agricultural front is the most important. Within these ten years many things will happen. We will progress in many spheres. War is a catalyst. We must take advantage of the unwitting opportunity that Pakistan has given us through this aggression to bring about a transformation in our economy. We cannot wait for ten years to achieve self-sufficiency in food. War gives momentum to history, as Lenin has said. Therefore, we must telescope the progress of the next ten

years into five years so that this country can be self-sufficient as soon as possible, and as a result thereof the agricultural economy can be rehabilitated.

Mr. Chairman: Shri A. C. Guha. He will have 12 minutes. We have to accommodate more Congress members.

Shri A. C. Guha (Barasat): Mr. Chairman, the situation on the food front is not only grave but it is almost critical. Reports from practically every State indicate that there is near-famine condition prevailing all over India. In such a situation the immediate problem which should engage our attention is the distribution of whatever foodgrains we may have in the country. And for distribution the main thing necessary is procurement. The difficulty is that the Government machinery first for procurement, and then for distribution, is not adequate. Last year when the situation was not so much acute, even then the achievement was short of the target by 3 lakhs tons in the matter of procurement. As against a target of 19 lakhs tons Government could procure only 16 lakhs tons of rice. This year when there has been a huge shortfall in the kharif crop and rabi crop prospect is also very gloomy, I do not know whether it will be possible for the Government to procure enough foodgrains to maintain their rationing policy, which at present they have initiated only in towns with a population of one lakh and above, all over the country.

I think, Government should give priority attention to the question of procurement and then build up a system of distribution. In September, 1964, we were told in a Government report:—

> "Government have, therefore, decided to set up a Foodgrains Trading Corporation to function on strictly commercial lines to purchase, store and sell foodgrains."

Since then it is more than one year, but as yet the Foodgrains Corporation has not started functioning in its full force or with full implication in all the States. If the Government machinery, even in such an emergency state, moved so slowly, it would be very difficult for the Government to maintain the rationing system and the break-down of the rationing system may ultimately lead to law and order position also. So, I would earnestly request the Government to empower the Food Corporation to have monopoly procurement rights all over the country and then to set up its own agencies for distribution. I fully support the views expressed by my preceedng speaker that unless there is a uniform machinery for procurement, you cannot have uniform price poliry also.

Regarding price policy, the Foodgrains Prices Commission have stated against the fixing of the maximum price policy, but the Government has fixed a maximum price policy. Perhaps, that was also necessary. But the tragedy is that the Government has not been able to enforce the maximum price policy even in Centrally administered areas. Practically every State has been conniving at the breach of the maximum price policy settled by the Government. If in a crisis like this the Government cannot implement its own policy, it will lead to disastrous results.

The estimate is that this year's kharif crop will be about 8 million or 7 million tonnes less than last year's and the last year's kharif crop was about 3 million or 4 million tonnes less than the previous year's; so we do not know what the ultimate position of food shortage will be as regards the kharif crop is concerned. For the rabi crop also the prospect is very gloomy. *The Review of the Food Situation* or yesterday's Food Minister's speech did not indicate the total amount of expected or apprehended food shortage in the country.

The Deputy Minister in the Ministry of Food and Agriculture (Shri Shahnawaz Khan): 7 million to 8 million tonnes.

Shri A. C. Guha: 6 million to 7 million tonnes will be the shortage in kharif crop. He does not say what will be the total overall shortfall from our requirements.

Shri Shahnawaz Khan: How can we predict rabi now?

Shri A. C. Guha: They must have some assessment.

Reports from practically every State indicate near-famine conditions prevailing there. I would refer in a few words to my own State, West Bengal, which is a chronically deficit State and naturally to face a more serious situation in a year of abnormal scarcity.

Shri Hari Vishnu Kamath (Hoshangabad): Chairman's State also.

Shri A. C. Guha: Yes. Anyhow, due to the bold policy taken by the Government for West Bengal in January, 1965 of introducing statutory rationing in Calcutta, I think, the position in Bengal has not deteriorated so much as it might have deteriorated otherwise. But the scheme depends on Centre's support and aids. But when the policy of statutory rationing was accepted some months ago, not only at the Central Government level but also at the level of the State Food Ministers, why so long most of the States have not introduced statutory rationing even in towns up to one lakh of population? If the Government accepts a policy, particularly when the food situation is growing critical year after year, it should be the concern of Government to see that that policy is implemented.

Before coming to the present crisis, I should say something about the lapse in our agricultural policies. In the report, *The Re-orientation of Agricultural Production*, it has been stated:—

> "It is the lack of inputs and the gulf between scientific techniques and farm practices that have been responsible for retarded progress during the three Plans."

As regards these inputs, irrigation water, I can understand, is very difficult—it may not be implemented according to target in time; there are many difficulties about that;—but what about improved seeds, fertilisers, improved implements? In every item there have been failures on the part of Government in implementing the policies and in achieving the targets put.

Then, coming to the next question, the gulf between scientific technique and farm practices, there is a complete divorce between the agricultural research institutes and the extension services. I do not know what they were going to do; I think, they have reorganised the Indian Council of Agricultural Research, but, as far as I have been able to get from these notes, even now, the Agricultural Research Council will not have anything to do with extension. So, what is the procedure they will now use for putting improved techniques into practices, or improved seeds and other things, improved varieties of crops, to be carried to the field through their extension service?

Shri A. P. Sharma (Buxar): Water is more essential than these techniques.

Shri A. C. Guha: What will be the machinery for introducing these things? So long it has almost been a complete divorce between research and extension.

In this connection I would refer to another point. Agriculture seems to be the concern of so many ministries and departments. Apart from

the fact that food is itself a head-breaking subject for any minister or ministry, I do not think the Ministas can devote enough attention to agriculture divided into so many segments under different heads, different ministries and different departments and when proper co-ordination is lacking. There should be one central authority for agriculture It may also be considered whether agriculture should be completely separated from food and formed into a separate ministry altogether. The Food Minister has alt the problems of distributing the scarce food and after that I do not think he will have much time to devote for the development of agriculture.

Now for the present problem, I think, I should compliment the Food Minister for his frank and outspoken speech yesterday. He admitted, the situation is very critical. For the prasent no other devices, no magic can produce food; therefore, he says it might be possible for us only to get under PL-480 massive assistance which would be required to meet the situatioo.

Now it is not the normal condition of food shortage which is more or less chronic, not only for India but for many other countries, except for some newly colonised countries, such as, the United States, Canada, Chile or Australia. Among the older countries, perhaps only France is self-sufficient or surplus in food; may other countries are deficient in food and it is the most difficult subject for any government to tackle. In such a situation what is the alternative for us? We have to import food. It is no use giving any false hopes to the nation that within five or ten years India will be self-sufficient in food. This false bope has been given to this House and to the nation repeatedly for the last thtee Plan periods; but every assurance has been falsified as it was bound to be falsified. So, it is no use giving false hopes; we will have to continue with the import of food to give the sustaining food to our people. For this, I think, there should not be any hesitation on our part to receive PL-480 food.

Here I would like to remind the House that Lenin in the wake of the Russian Revolution, when there was almost famine condition prevailing throughout Europe, refused tn take any American wheal on the ground that "food is a weapon"; but, when in 1922 famine broke out in Russia and millions of people were starving or dying, he allowed Maxim Gorky to issue an international appeal for food to be supplied to Russia.

All the intellectuals of the world, including Rabindranath Tagore, Einstein and Romain Rolland joined in the appeal and American food was accepted by Lenin in spite of his original objection to that. Today it is not a qucation of India asking for food; it is a question of surplus nations fulfilling their obligations to humanity. It is their obligation to supply food to this country at such a crisis when the whole nation is faced with impending famine condition.

In the recent Conference of Food Ministers under the Food & Agriculture Organization, the Director-General of that Organisation said:

> "The world has no frontiers; we cannot see one part of humanity disintegrate in starvation and death without the rest is being deeply involved."

The question is that surplus nations should come forward and fulfill their obligations to humanity. Regarding the freight charges for carrying of PL 480 food to India, I think it is a fit question for the USA now to consider whether now that clause also should not be suspended. Food should be carried to India to avoid the near-famine conditions prevailing in India taking the form of a devastating famine, and that should be an obligation for the civilised world. It is not a question of India asking for

[Shri A. C. Guha]

aid; there is no question of bargaining or coming to terms.

Mr. Chairman: The hon. member may try to conclude now.

Shri A. C. Guha: I shall finish in two minutes.

Half of the population of Maharashtra is in the grip of starvation. In every States there is almost similar condition. It is a matter of compliment for the Government that, in the last 18 years, there has been no starvation death; even this year there has not been any starvation death. (*Interruptions*) There may be just one or two stray cases.

One thing I want to remind the Government about. They have mentioned a number of measures to be taken in consideration of scarcity and drought. They are welcome measures no doubt, but I would like to say that they have not contemplated any precautionary steps for the outbreak of epidemics. People will now be compelled to take unusual food, unaccustomed food, not easily digestible food, and that may lead to many diseases—cholera, gastro-enteritis, dysentery and many other diseases. So Government should immediately take some measures for the prevention of epidemics and for the supply of drinking water to all the villages wherever there may be drought conditions.

With these words I now conclude. I think that the Government will be able to cope with the situation and that the Government machinery will be geared to the task of monopoly procurement of all foodgrains. There should be one price policy for the surplus as well as the deficit States; the surplus States should not consider themselves as belonging to another country; they belong to the same country and if there is scarcity, that should be shared by all.

Shri Dinen Bhattacharya: I have listened to the speeches made by the different members as well as the speech given by the Minister of Food and Agriculture in respect of the food situation. This food debate takes place in every session and usually at every next session when we hear the speeches either of the Government or of the other members, we find that the situation depicted is worse than that depicted in the previous years and in their previous speeches. This has happened this time also. Even the Food Minister, in his speech, has mentioned—Shri A. C. Guha also mentioned—that, last year, the kharif production was less by 3 to 4 million tonnes than that of the previous year and this year it will be 6 to 7 million tonnes less than that of the previous year. So this is the situation. May I put one question to the Government: why even after the completion of the three Five-Year Plans and why even after injecting Rs. 2,634 crores through the American monopolists, by way of taking loan or aid in the form of food, the situation is such? The time is now ripe both for the Government and the people of our country to re-think about the situation that is prevailing in the agricultural sector. There must be something basically wrong with the policy of the Government. It is not that it has not been stated in this House or outside the House. The real problem lies: we are reiterating every time that, so long as the radical land reforms are not carried out to the interest of the real tillers of the land, there cannot be any change in the food situation. The situation that is now prevailing is as a consequence of the policy so far pursued by the Government.

Just now, our veteran Congress leader, Shri Guha, said that, in the last 18 years there was no case of starvation death. I say that this is not a fact. It may be that, within the periphery of this parliament or in the Writers' Building—in the West Bengal Assembly—or in Rotenda when you have meetings and hear speeches from the bureaucrats and Ministers, one may say that there is

no case of starvation death. But I say that hundreds of cases of starvation deaths have taken place. Of course, the Government will say that they are not cases of starvation but are something else. Only the other day when, in the West Bengal Assembly, one member drew the attention of the Government to the fact that, near Calcutta, in Hattu, a family of five committed suicide, the Government came forward with the explanation that they did not commit suicide. But I know that it was a case of starvation; for a long time that gentleman could not procure two meals a day for his family and so ultimately all of them committed suicide. In the columns of the West Bengal newspapers this has come and still the Government will say that there has been no case of starvation death. The other day the Food Minister—there was a mention about starvation death in Mysore—said that he got a telegraphic message that it was not a case of starvation. In the British days they used to say that they were cases of malnutrition or some disease. But if you really examine the cases, you will see that starvation has started in all parts of the country. I know from my personal experience that, in West Bengal, the people in the rural areas are taking meals not 14 times in the week; they do not take even one full meal daily.

An hon. Member: Everybody knows that there is shortage of food. Please say something as to how we can solve it.

Shri Dinen Bhattacharya: I have stated that, so long as you do not give real consideration to the problem of land systems and do not carry out the radical land reforms in the interest of the peasantry, there cannot be any improvement in the situation. In certain States land reforms have been done in a haphazard way and no benefit has gone to the real farmers. What to talk of water and manure; the primary thing is land. You go round the countryside and you will see that the majority of the peasantry are share croppers and land labourers. They do not have the real right to the land. When that is the position, how can we expect that a farmer will exert his whole energy for increased food production, knowingfully well that whatever he will produce will be taken away or usurped by the landlord to the extent of half and sometimes even three-fourths. So, unless and until the present position is radically changed we cannot expect anything.

I know that every time Government will come forward and put the blame on some aspect or the other of the situation. This time Government have been saying that there has been drought and that the rainfall has not been sufficient and so there is a danger. But may I ask what the situation in Bengal is? The Chief Minister of West Bengal himself has stated that there had been record rice production during the last year. If that be so, why is there scarcity? Why is there rise in prices? And why is there starvation? What is the wrong there? These questions must be answered. We have been told that something has been done in West Bengal as if to give the impression that everything is all right there. But I would submit that everything is not all right there. Now, Government have come forward with some short-term measures. In West Bengal, the State Government have declared that they will make monopoly purchase and monopoly procurement. But I know the fun and the people know the fun. Let us take the question of prices, for instance. Government have stated here on the floor of the House many times that the peasantry must be given remunerative prices. But only Rs. 14 to 16 has been fixed as the price of one maund of rice that would be procured from the peasantry. But the Chief Minister of West Bengal himself has said that in some cases an amount up to Rs. 21 is spent on producing one maund of paddy. And yet Government are offering them only Rs. 14 to 16 per maund of rice. In view of this, how can we expect that the

[Shri Dinen Bhattacharya]

peasantry that has got surplus would come forward and volunteer that surplus to Government? This matter must be looked into. The West Bengal Government say that the prices have been fixed in accordance with the advice given by the Agricultural Prices Commission. May I ask how that price was calculated and on what basis that price was fixed? This question must be answered, if we want to achieve any bit of success in the procurement policy of Government.

No doubt, rationing is there in West Bengal. The Food Minister here has said that the amount of ration would be 12 ounces uniformly all over India and it may be brought down to eight ounces if there is more scarcity. But I would point out that in some parts of the urban area where rationing is already in force, only 9 ounces are given. I do not know how Government would explain this position. They have to explain why in spite of the record production of last year, and in spite of the aid committed to the West Bengal Government by the Centre to enforce the rationing system, the amount of ration that is given has been cut down twice and the prices have been increased thrice to the extent of 88 paise.

As for the quality of the rice supplied, I may tell you that the rice supplied sometimes is not fit for human consumption and is not edible at all. The old stocks are brought from somewhere. I do not know where those stocks were lying. Anybody who stays in Bengal and particularly in Calcutta will corroborate my statement that the rice that is sometimes supplied is not edible at all, and he will wonder where that rice stock had been kept for so long.

Then, we are asking our working people to work hard. We are asking the labourers to work hard. There is no differentiation between the labourers and the non-labourers in regard to the quantum of ration. Even in the British days, they had the system of giving more ration to the manual labourers as compared to the non-manual labourers. But this time the Congress Government has equalised everybody. A person may be a clerk or a doctor or he may be engaged in a hazardous job; yet the quantity of ration that he would get would be the same.

A promise was made by the Central Government that every factory which employed more than three hundred workers would have a consumers' co-operative society from where the workers could get all the food articles as well as other essential commodities. But up till now, nothing has been done in my part of West Bengal and I know of many places where also a similar situation prevails.

Our Prime Minister has given a call for self-reliance. That is good. But the subsequent events have shown that this call is not serious, and moreover it is only a camouflage tactics to hide the dangerous consequences of the policy that Government have pursued for so long and are still pursuing.

From the proceedings of the FAO conference in Rome, which was attended by our Food Minister, it is abundantly clear that Government are not at all thinking of discontinuing the import of foodgrains under PL-480 from the US imperialists. What Shri C. Subramaniam had said in his speech at the FAO conference is a clear indication that all the statements regarding self-sufficiency and freedom from PL-480 were made only to hoodwink the Indian people. There, he even appealed to the US imperialists not only to continue but to extend the period of help under PL-480, knowing fully well that the US imperialists will blackmail us at any time when we are put in difficulty. From all these happenings it is quite clear that Government are refusing to abandon the path of bankruptcy

which they have followed for so long. They are increasingly relying on PL 480 loans and aids. They are still trying to find out a solution within the framework of the US agricultural strategy for the world.

Unless the entire policy of Government with regard to procurement, land reform, increasing production, fixation of prices, distribution etc. is radically altered, no improvement is possible.

Government have asked for co-operation from all the political parties. But I know that so far as my party, which is the biggest party in Kerala and in some other States is concerned, it has not been consulted whenever the Food Minister has called for a meeting with the political parties. In spite of that I would submit that if Government take a serious view of the situation and adopt a policy which will benefit the peasantry and which will bring about a radical change in the land tenure system and also a change in the bureaucratic method of distribution of food, the situation will change and we may achieve self-sufficiency. In this conection, I want to make some suggestions to Government.

Government are talking of self-sufficiency and they are asking the people to miss a meal a week. But may I humbly ask Government to guarantee the other 13 meals a week to the ordinary common man before asking him to forgo the fourteenth meal in the week? If Government could ensure the other thirteen meals, I am sure the people will voluntarily forgo one meal a week, if that will really solve the food problem of our country.

14 hrs.

The way Government go about this is very funny. Government say we want to increase the production of food by cultivating the fallow land in the Rashtrapati Bhavan and Raja Bhavans. Before that, may I humbly ask: Will Government take over all the cultivable fallow lands and distribute them to the landless labourers and poor peasants so that lands that are cultivable may be cultivated and a solution may really be found to the food problem? Without doing those things which will really solve the problem, if you are thinking in terms of cultivating in tube in terrances of palatial buildings in Calcutta, Bombay and other places, you will only be doing something which is abured. People will laugh at it. People do not take that as a serious effort to solve the food problem.

Then about irrigation. Sometime ago the Minister of Irrigation was present in the House—and I had put a question to the Irrigation Minister: was he in a position to state how many tube-wells were sunk for irrigation during the Third Plan in West Bengal and how many had been put into commission? He could not reply. He stated that he had to call for the information from the State Government. I know from personal experience that not a single tube-well has been brought into commission. They remain unutilised either for want of power or for some other reason. This is the state of affairs.

So far as electricity consumption is concerned, I know that not even 0.3 per cent is being supplied to the real farmers and agriculturists. We talk of giving all sorts of incentives and help; we talk of giving manure and fertiliser. All this has turned out to be a fiasco everywhere. In time of need, the farmers do not get any manure. They cannot afford it because they do not have cash resorces. When they go for credit, there is a vast paraphernalia of formalities to be gone through so much so that it is impossible for ordinary farmers to get credit. All these credits are being utilised by the Congress fellows in the villages for development of their ownself and for doing propaganda for their own party bosses.

Shri K. N. Tiwary (Bagaha): This is not a fact. What is all this that he is talking from China to Peru?

Shri Dinen Bhattacharya: Come with me. I will show you hundreds of instances where this is being done.

In West Bengal, they want to procure food through cooperatives. The co-operative scheme is a bunkum and a mockery. In West Bengal, not a single co-operative is functioning. It is all in paper only. It is all in the hands of persons who are working in villages as Congress volunteers of Ministers or Congress leaders.

Some hon. Members: No, no.

Shri Dinen Bhattacharya: My suggestion is that small and medium irrigation projects should be taken up in right earnest and real co-operation should be enlisted from the villages. Otherwise, nothing tangible is going to be achieved.

There is lacuna in the ceiling system. There are some big people called jotdars or big landlords. By some trick or other, they manage to keep for themselves large tracts of land over and above the ceiling prescribed. This must be looked into and the defects rectified. All the land in excess of the ceiling should be taken over from these people and distributed among the poor peasantry.

Reference was made here to the Food Corporation of India, that it is there only in name in the matter of procurement. Nobody cares for it. The Andhra Government the other day refused to allow the Food Corporation to procure foodgrains from certain districts. This is the situation in other states also.

While effecting procurement, just as in West Bengal, we must exempt the farmers who have got uneconomic holdings. In our place exemption is given in cases where the holding is only 1½ acres of irrigated land or 2 acres of non-irrigated land. There 5 or 6 maunds per bigha is the average production, which comes to 15 maunds per acre. A farmer who has got a family of 5 members cannot manage throughout the year with this meagre yield. He has to surrender the production if he has surplus land, above 2 acres non-irrigated land and 1½ acres irrigated land. These things must be looked into so that he is not deprived of the yield which is not even sufficient to last him throughout the year.

Another thing is regarding the enthusiasm to be created among the peasantry. How can they surrender their surplus grains to Government knowing full well that for their very minimum necessities which they will have to purchase from the market they will have to pay more? So Government must give them a guarantee to supply them their essential commodities at moderate prices so they may not have to pay exorbitant prices for their daily necessities.

Regarding the working class population, at least for manual labourers, Government must give some extra ration. Government must do away with the distinction between the urban and rural population. The same quantum of food should be given to both the rural and urban people, and some extra quantity should be given to the working people both in the rural and urban areas. Unless you do this, you cannot expect these people to do their best to exert their whole energy for producing more either in the agricultural sector or in the industrial sector.

Summing up, I will say that so far the Government has bungled with the food of the people and the Congress Party has utilised food for politics. While they are asking other parties not to make political use of the food situation, I know in West Bengal from my personnal experience that the Congress Party, just on the eve of the election, is functioning in such a manner that they may get the support of a good chunk of the

persons who are benefiting from this emergency and this serious food situation. They are managing to satisfy these people so that at the time of the election they would come forward and act as their agents.

The real cause of the trouble is this, that the Government is following an anti-people policy, a pro-hoarder policy and a policy of appeasement of the American imperialists. That is the reason why our country has been brought to such a pass that everybody is now feeling that the situation is getting hopeless. I will therefore urge upon Government even now to think about this and bring a change in their policies. Otherwise, the situation will get worse and the people will not forgive them; they will not hesitate to come forward and throw out this Government and introduce a new policy so that our country may not suffer for want of food and other things.

Mr. Chairman: Shri K. C. Jena.

Shrimati Lakshmikanthamma (Khammam): Yesterday the Speaker said . . .

Mr. Chairman: There is no question of what the Speaker has said or not. The point is that he has said that all the States must be first called, and in the Congress Party itself there are two States yet to be called. Therefore, the other States must wait for the second chance.

श्री वाल्मीकी (थुर्जा): इससे पहले कि वह बोलें, मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं ।

सभापति महोदय: आप बैठ जाइए । के० सी० जैना माहब, आप बोलना चाहते हैं तो बोलें ।

Shri Jena (Bhadrak): I am thankful to you for giving me this opportunity. I come from Orissa, which is taken as a surplus State. Actually it is not a surplus State because it has no other commodity to exchange, and therefore we deal in food. This year due to failure of monsoon, we have also sustained a loss of about 40 to 50 per cent.

We are now confronted with one of the most testing times in the history of our nation. It is unfortunate that we are engaged in an armed conflict with Pakistan because she has thrust the same upon us. It is our national desire to develop friendship and neighbourliness with the peoples of the world, but in spite of that it is unfortunate that two of our neighbours, China and Pakistan, have become extremely hostile to us. They may attack our country again any time that suits them. Therefore, we must build up our defence and food front within the shortest possible time. The food front is as much vital as the military front, particularly so in view of the uncertainty of supplies of foodgrains from outside and the poor prospects of the kharif crop due to failure of monsoon. In view of this, our Government should devote much of their attention to the question of raising rabi crops abundantly, prompt procurement and smooth distribution of foodgrains in the country. To implement this programme effectively, the full co-operation of the State Governments is badly necessary. I hope they will extend the same co-operation as soon as it is asked for.

I think it would be convenient and better if the responsibility of procurement of foodgrains is given to the States, because the State Governments have got their network of agencies in the rural areas, and they can do this procurement business in a convenient way. The farmers desirous of selling their foodgrains will have to face no difficulty to come to the procurement centres because they would not be far away from their places. If the procurement is done by the Centre, I am afraid the procurement centres might be few and far between. Due to the small number of procurement centres, the farmers will have to face difficulty because they will have to cover a long distance to the procure-

[Shri Jena]

ment centre and wait there to dispose of their foodgrains. Therefore, these difficulties of the formers should not be lost sight of.

It is a saying from ancient times:

वाणिज्यम् वसते लक्ष्मी,
तदर्धम् कृषि कर्मणि ।
तदर्धम् राज सेवाया,
भिक्षायाम् नैव नैव च ॥

This was the position then. Business was the most profitable occupation. Next to business it was agriculture, next to agriculture it was service. But nowadays the position is not that. The position is like this that business has got its place in the economic field, service is the most secure one for the maintenance of one's family but agriculture is a neglected one. It is neither secure nor profitable. That is why our students coming out of the colleges and schools do not like to take to agriculture for their livelihood. Unless we make this agriculture a profitable one and a secure one, I do not think that we will be self-sufficient in food.

As far as the price of foodgrains is concerned, I should say that there should be uniform prices fixed for the foodgrains through the country. There might be some objection to this, but this should be enforced by the Government. If possible, the prices of essential commodities should be fixed along with food. Uniform prices of foodgrains will hardly allow any scope for inter-State smuggling. This business sometimes renders a surplus area into a deficit area. Some unscrupulous people sometimes sell away their foodgrains surreptitiously in an area where they are forbidden to do so by law. They do so because they get a higher price there, and they again try to purchase the same commodity from their own area if the price is low there. To encourage honesty and to discourage this blackmarketing and smuggling, we should have uniform prices for foodgrains throughout the country.

It is our experience in the past that the States have contributed their surplus food to the common pool. Now they should be asked to contribute more foodgrains, due to the emergency, for the deficit areas, even though this involves a certain amount of sacrifice on the part of the local consumers. I hope we would be able to tide over this difficult period by sharing our good fortune and hardship alike without depending on outside countries for foodgrains.

I am glad to mention here that our hard and persistent labour under the esteemed leadership of the late Panditji has succeeeded in bringing about secularism in the country. The present emergency has tried and tested it well. All sections of the people of our country, whether rich or poor, have firmly stood as one man by the Government to face the enemy and the emergency boldly. Our present leader Shastriji has issued a call to miss a meal in a week to the nation. The nation has received it warmly. To keep this programme alive for the present is all right but we must try to overcome this by producing more food to meet our requirements.

Our kharif season is almost over, and we have gone over to the rabi season. Our State Governments and all our food production centres and organisations are to be mobilised for producing the maximum quantity of food. We should try to see that not an inch of land remains fallow if it is within reach of any source of water. All the community development blocks should be asked to have a double march with this programme. Our Government should make available seeds, manures, insecticides, water pumping sets etc. to the growers as far as possible. Damage done to vegetable and kitchen gardens by monkeys is on the increase, and it should be checked by the Government, and the grower should be helped.

I want to say a word about statutory rationing. In these days of hardship and scarcity, we should have statutory rationing particularly in big cities and highly industrialised areas. There might be some people who are reluctant to this idea, but this should be enforced by the Government. Unless the big cities and highly industrialised areas are cordoned off and consumption in them is controlled, they will drain the food from the neighbouring areas, and the areas in distress will go on increasing. It will be beyond the capacity of the government to manage. Therefore, we should have rationing at least in big cities and highly industrialised areas. I want to speak a word about the rationing system in Calcutta. Rationing has been introduced in Calcutta but the ration received by an individual is one kilo of atta and one kilo of rice for a week. This is hardly sufficient for a labourer. It should be increased at least a little.

श्री सरजू पाण्डेय (रसड़ा) : सभापति महोदया, हम लोग कई बार सदन में खाद्य समस्या पर बहस कर चुके हैं। आज हम ऐसे मौके पर खाद्य स्थिति पर विचार कर रहे हैं, जब कि हमारे देश में बहुत ही गम्भीर संकट है।

एक बार एक कांग्रेस के मेम्बर ने मुझ से कहा था कि अब तक दुनिया में सात आश्चर्य थे, किन्तु कांग्रेस सरकार दुनिया का आठवां आश्चर्य है और उन्होंने इस सिलसिले में यह भी कहा था कि जिसे कोई नहीं चाहता, वह भी चल रही है। यह बात समझ में नहीं आती है कि कांग्रेस के सदस्यों और विरोधी दलों ने सरकार की खाद्य नीति की जिन बातों की मुख्य रूप से आलोचना की है, आज भी सरकार उन बातों से पीछे नहीं हट रही है। बजाये इस के कि सरकार मेम्बरों की ओर से दिये गए ठोस सुझावों पर ग़ौर करे, वह थोथे नारे ले कर देश के सामने आती है, मिसाल के लिए "गमले में अनाज उगाओ" "छत पर अनाज उगाओ", "भूखे रहो", "चूहे मारो", " बिल्ली भगाओ", आदि ।

श्री शाहनवाज़ खां : मैं माननीय सदस्य को बताना चाहता हूं कि पिछली लड़ाई में जब जर्मनी ने रशा पर हमला किया था, तो वहां पर हर एक घर में गमलों में अनाज और सब्ज़ी लगाई गई थी ।

श्री बृजराज सिंह (बरेली) : क्या सरकार ने यह तय कर लिया है कि हम विदेशों की नकल करेंगे, चाहे हमारे यहां लाखों एकड़ ज़मीन पड़ी रहे ? वहां पर तो सरकार कुछ करती नहीं है और गमलों पर ज़ोर दे रही है।

श्रीमती लक्ष्मी कांतम्मा : जो कुछ भी अच्छा है, वह हम ले सकते हैं ।

श्री सरजू पाण्डेय : उपमंत्री जी ने रशिया की मिसाल दी है। इससे पहले भी एक कांग्रेसी सदस्य ने रूस की मिसाल दी थी कि जब रूस पर संकट पड़ा, तो उस को अमरीका से गल्ला लेना पड़ा। मेरा यह चार्ज है कि पिछले अठारह वर्षों में सरकार ने कृषि की तरक्की के लिए ठोस काम करने के बजाये केवल थोथे नारों से काम लिया और जो काम करने से अनाज का उत्पादन सही मानों में बढ़ सकता था, वह उस ने नहीं किया। मैं यह नहीं कहता कि अगर रूस में कोई अच्छी बात है, तो वह न ली जाये। मैं यह भी नहीं कहता कि अगर हमारे देश में अनाज नहीं पैदा होता है, तो हम लोग भूखे मर जाय, लेकिन किसी देश से अनाज न लिया जाये। लेकिन मैं इतना अवश्य कहना चाहता हूं कि अगर पिछले अठारह वर्षों में इस दिशा में पूरा प्रयत्न किया गया होता, जो कि नहीं किया गया है, तो देश में अनाज की काफ़ी पैदावार हो सकती थी और तब ऐसी गम्भीर स्थिति न पैदा होती ।

हमारे मुल्क में कृषि के सम्बन्ध में सब से बड़ी ज़रूरत सिंचाई की है। जहां तक मुझे मालूम है, कुछ प्रान्तों में और खास तौर से पूर्वी उत्तर प्रदेश में अभी तक केवल छः फ़ीसदी सिंचाई का इन्तज़ाम किया गया है और सारे मुल्क में टोटल शायद 18 फ़ीसदी

[Shri Sarju Pandey]

है । कांग्रेसी सदस्य, श्री गहमरी, इस वक्त हाउस में नहीं हैं । पिछली बार उन्होंने सदन में रो रो कर पूर्वी उत्तर प्रदेश की व्यथा बयान की थी । उस के बाद पटेल कमीशन बनाया गया, लेकिन उस की एक रीकमेंडेशन को भी उस के एक सुझाव को भी सरकार ने नहीं माना । उल्टे उस ने यह किया कि कुछ अफ़सरों को बढ़ा दिया—7 इंजीनियरों की जगह 14 इंजीनियर हो गए, 1 बी० पी० ओ० की जगह 2 बी० पी० ओ० हो गए और 3 ग्राम सेवकों की जगह 25 ग्राम सेवक हो गए । अगर यही सरकार की खाद्य नीति है, तो इस से क्या हो सकता है ?

सरकार ने "अफ़सर बढ़ाओ" आन्दोलन तो चला दिया, लेकिन पटेल कमीशन ने पूर्वी उत्तरप्रदेश को सस्ते दर पर पावर देने के सम्बन्ध में जो रीकमेंडेशन की, उस को नहीं माना गया । उस ने यह भी रीकमेंड किया था कि उस क्षेत्र में सिंचाई की व्यवस्था की जाये, सड़कें और नहरें बनाई जायें । जहां तक सड़कों का सम्बन्ध है मेरी समझ में चौथी पंचवर्षीय योजना में मुश्किल से एक ज़िले में तीन चार मील पक्की सड़क मिली है । इलैक्ट्रिसिटी का आलम यह है कि जब मिर्ज़ापुर का पिपरी डैम बनाया गया, तो पूर्वी उत्तर प्रदेश के किसानों को यह आश्वासन दिया गया कि उन को सस्ते दाम पर इलैक्ट्रिसिटी दी जायेगी, लेकिन वह इलैक्ट्रिसिटी बिड़ला को दे दी गई और वहां के किसानों को आज तक सिंचाई और दूसरे कामों के लिए इलैक्ट्रिसिटी नहीं मिली है । ऐसी अवस्था में सरकार को चाहिए कि वह थोथे नारों को छोड़ कर सिंचाई की व्यवस्था करे और ठोस काम करे, लेकिन उस की तरफ़ सरकार का ध्यान नहीं जाता है ।

जहां तक ज़मीन का सवाल है, ज़मीन जोतने वाली जनता के पास ज़मीन नहीं है । आज भी करोड़ों एकड़ बंजर ज़मीन पड़ी हुई है, जिस पर गांवों के पुराने ज़मींदारों और गुंडों ने कब्ज़ा कर रखा है । ज़मीन का जो बंटवारा किया गया है, वह सोलह आने ग़लत है ।

14.36 hrs.

[SHRI SONAVANE in the Chair]

उत्तर प्रदेश में जो चकबन्दी हो रही है, वह चकबन्दी नहीं, बल्कि किसानों की लूट है ।

एक माननीय सदस्य : चक्करबन्दी है ।

श्री सरजू पाण्डेय : आप को यह जान कर आश्चर्य होगा कि जो नये चक बनाए जा रहे हैं, उन में सीधे हल नहीं चल सकते । जो बड़े, पैसे वाले और पावरफुल लोग हैं, उन के चक अच्छी जगहों पर बनाए गए हैं और ग़रीब लोग रद्दी ज़मीन में फेंक दिये गए हैं । जो वास्तव में अन्न पैदा करनेवाले और परिश्रम करने वाले लोग हैं, इस चकबन्दी में उन के साथ अन्याय किया जा रहा है ।

श्री रामसेवक यादव ने पम्पिंग सैट्स के बारे में कहा कि पम्पिंग सैट्स के लिए जितना कर्ज़ दिया जाता है, उसका 75 फ़ीसदी दूसरे कामों में इस्तेमाल किया गया है और उस से पम्पिंग सैट्स नहीं ख़रीदे जाते हैं । मैं चैलेंज करता हूं कि इस बारे में जांच कराई जाये । पम्पिंग सैट्स से ब्लाकों के वोट ख़रीदे जाते हैं । जब एक मेम्बर ने कहा है कि इस पर राजनीति की जाती है, तो मंत्री महोदय को बुरा लगा । लेकिन वास्तविकता यह है कि एक एक सीमेंट के बोरे पर, एक एक पम्पिंग सैट पर, एक एक कुंए पर पूरे उत्तर प्रदेश में राजनीति होती है जिस मेम्बर को सरकार नहीं देगी, वह उस के ख़िलाफ़ हो जायेगा । वह हार जायेगा ।

मुझे मालूम है कि लोगों ने ट्रैक्टर के लिए पैसे लिये, लेकिन उन से लड़की का तिलक चढ़ा दिया, उस की शादी कर दी । वास्तव में कोई ट्रैक्टर नहीं है, लेकिन काग़ज़ पर ट्रैक्टर चल रहा है । गांव समाज की सारी बंजर ज़मीन को ले लिया गया है और उस की

बेदखली का कोई प्रबन्ध नहीं है। स्टेट गवर्नमेंट कहती है कि सेंट्रल गवर्नमेंट को कहो और सेंट्रल गवर्नमेंट कहती है कि स्टेट गवर्नमेंट को कहो। जब हम पूछते हैं कि फूड किस का प्राबलम है, तो कहते हैं कि मेनली स्टेट गवर्नमेंट डिम्मेदार है। कोई भी डिम्मेदार हो, लेकिन यह तथ्य है कि पूरा कांग्रेस शासन इस के लिए डिम्मेदार है। सरकार चाहे कितना ही डिफेंस का नाम ले, चाहे कितना ही युद्ध-स्तर पर अन्नोत्पादन का नाम ले, लेकिन केवल थोथे नारों से उत्पादन नहीं बढ़ेगा, जब तक कि देश के किसानों के लिए खाद और पानी का इन्तजाम न किया जाये।

अभी मैं पंजाब गया और वहां मुझे यह जान कर हैरत हुई कि एक हजार एकड़ जमीन बिड़ला को दी जा रही है फ़ार्म खोलने के लिए, ताकि वहां पर अच्छे बीज तैयार किये जायें।

एक माननीय सदस्य : वह को-आपरेटिव फ़ार्म है।

श्री सरजू पाण्डेय : मुझे सूचना मिली है कि अच्छे बीज के नाम पर जो फ़ार्म बनाया जायेगा, वहां पर अच्छा बीज तो नहीं बनाया जायेगा; लेकिन कुछ गरीब अपनी जमीन से लाजिमी तौर पर बेदखल कर दिये जायेंगे।

अन्न की महंगाई की बात कहां तक की जाये? थोड़े दिन पहले मैं कलकत्ता गया था। वहां पर तीन रुपये किलो पर भी चावल नहीं मिलता है। पूर्वी उत्तर प्रदेश की भी वही हालत है। मेरे हाथ में "ब्लिट्ज" है, जिस का हैडिंग है "अकाल के साये में एक करोड़ लोग"। इस में फोटो भी छपे हैं कि महाराष्ट्र और दूसरे प्रान्तों में क्या हालत हो रही है।

इस समय सरकार की जितनी भी योजनायें हैं, खुदा के लिए उन को बन्द किया जाये—उन को बिल्कुल खत्म कर दिया जाये। जैसा कि कई बार पहले भी कह चुका हूं, "चूहे मारो" आन्दोलन, "मुर्गी पालो" आन्दोलन, "कम्पोस्ट बनाओ" आन्दोलन—इन सब से कोई लाभ नहीं है, ये बिल्कुल फ़िजूल हैं।

कम्पोस्ट खाद के लिए 150, 200 रुपये मिलते हैं। लेकिन कोई उस के लिए गड्ढा नहीं बनाता है। लोग रुपया जेब में डालते हैं। दो तीन ईंट ऊपर डाल देते हैं और जब पानी आ गया, तो सब कुछ बह जाता है। अगले साल कोई कम्पोस्ट का गड्ढा नहीं मिलेगा इस लिए थोथे नारों को छोड़ कर सही मानों में अमल किया जाना चाहिये, जिस की बहुत ज्यादा जरूरत है।

कल मैंने राज्य सभा में वित्त मिनिस्टर साहब का बयान पढ़ा। उस से मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा कि सोवियत ट्रैक्टरों का दाम बहुत कम है, इस लिए यहां के ट्रैक्टर के दाम के साथ उस को तूल कर के एक बीच का दाम निश्चित कर दिया जाये। उन्होंने कहा कि यहां के ट्रैक्टर का दाम 11,000 रुपये है और सोवियत ट्रैक्टर का दाम 5,000 रुपये है, इस लिए उस का भाव बढ़ा कर कोई बीच का भाव तय कर दिया जाये।

एक माननीय सदस्य : 9,000 रुपये कर दिया है।

श्री सरजू पाण्डेय : उस का दाम 4,000 रुपये बढ़ा दिया गया है। अगर यही सरकार की खाद्य नीति है, तो यह तो एक मजाक है। इस के होते हुए देश के किसान क्या कर सकते हैं? पहले सोवियत ट्रैक्टर 5,000 या 5500 रुपये में आता था और मामूली किसान उस को खरीद सकता था।

श्री पु० र० पटेल (पाटन) : क्या पांच हजार रुपये का ट्रैक्टर गरीब किसान के लिए है?

श्री सरजू पाण्डेय : गरीब किसान भी उसे खरीदता है। अगर पांच हजार रुपये में ट्रैक्टर मिलता है, तो खाली गरीब किसान के पास ही खेत नहीं है।

[Shri Sarju Pandey]

आपने जितनी स्कीमें बनाई हैं उनको मैं अभी पढ़ रहा था। ये जो नोट हम लोगों में सर्क्युलेट किए गए हैं, —इनको मैं पढ़ रहा था। लेकिन आप देखें कि फैमिन कोड कब बना था? यह अंग्रेजों के जमाने में दो सौ साल पहले बना था। उस में क्या है? उस के मुताबिक सूखे की समस्या को हल करने के लिए हमारी सरकार चहलकदमी करती है। एक एक आदमी भूखों मर जायेगा लेकिन इस एक्ट के तहत काम करने नहीं जाएगा। इस के तहत उसको मजदूरी बहुत ही कम देने की व्यवस्था की गई है। वह भूखों मरने लगेगा तो भी इतने सस्ते रेट पर आ कर आप के पास काम नहीं करेगा। इस से उसका पेट भी नहीं भर सकता है। यह चीज गलत है। आदमी को कम से कम इतने पैसे तो मिलें कि वह अपना पेट भर सके। जब वह नहीं होता है तो कौन काम करने जाएगा। इस फैमिन कोड की तरफ भी आपको ध्यान देना होगा और इस में आमूल चूल परिवर्तन करने होंगे।

सरकार रिपोर्टें तो दे देती है। लेकिन आप देखें कि पिछले अठारह वर्ष में हमारे देश में लोगों की आमदनी कितनी बढ़ी है? बहुत से मैम्बर साहिबान को ने इसको कोट किया है। लेकिन आप देखें कि आज भी एक करोड़ आदमियों की आमदनी 27 नए पैसे प्रतिदिन है। वह ऐसी अवस्था में खाएगा क्या। यह कहा जाता है कि मछली खाओ। बिहार के एक मिनिस्टर साहब ने स्टेटमेंट दिया था कि अन्न नहीं मिलता है तो मछली खाओ। इसी तरह से फ्रांस की महारानी ने एक बार एक बात कही—जब जुलूस निकला और वहां रोटी रोटी के नारे लगाते हुए लोग महारानी के महल के बाहर पहुंचे। महारानी ने पूछा कि ये सब लोग शोर क्यों मचा रहे हैं और जब उन को बता यागया कि इनको रोटी नहीं मिलती है तो उन्होंने कहा कि रोटी नहीं मिलती है तो इनको कह दो कि डबल रोटी खायें, केक खायें। इसी तरह से आप भी कमाल की बात करते हैं। रोटी नहीं मिलती र तो आप कहते हैं कि मछली खाओ जो कि पांच रुपये किलो के हिसाब से बिकती है। आप कहते हैं कि गोश्त खाओ जो कि तीन रुपये किलो के हिसाब से बिकता है। आपके राज में आलू तक तो मिलता नहीं है। यह दुनिया का आठवां आश्चर्य बन कर रह गया है आपका राज्य। आपको अन्न की समस्या हल करनी होगी।

आज प्रोक्योरमेंट की बात हो रही है। आप कहते हैं कि आप प्रोक्योरमेंट करेंगे। लेकिन जिन के पास गल्ला नहीं है उन से आप क्या लेंगे। आप ने कहां है कि दो क्विंटल धान हर किसान से लिया जाएगा सभी स्टेट्स में। मैंने खास कर बिहार में एक बात देखी है। दो क्विंटल से ज्यादा धान जिस के पास है वह तो उस को चोर बाजारी में बेच सकता है। ब्लैकमार्किट में बच सकता है लेकिन जिस बचारे के पास किसान के पास पांच एकड़ जमीन है तो उसको भी कहा जाता है कि तुम दो क्विंटल धान दो। पांच एकड़ में अगर उसने मिर्ची भी बोई है तब भी उस से कहा जाता है कि हमें दो क्विंटल धान दो, चाहे कहीं से भी दो, बाजार से खरीद कर ही चाहे दो। बिहार में ऐसा हुआ है, कि पांच एकड़ जिन के पास जमीन है उन से दो भी क्विंटल धान की मांग की जा रही है। इस तरह से आपकी जो स्कीमें हैं वे नहीं चल सकती हैं।

उत्तर प्रदेश के बारे में जितना कहा जाए थोड़ा है। वहां पर सरकार क्या है एक मजाक है। वहां तमाम की तमाम स्कीमें जो हैं वे इस बात को ध्यान में रख कर बांटी जाती हैं कि कौन इलाका सी० बी० गुप्त साहब की पार्टी वाला है और कौन इलाका कमलापति त्रिपाठी साहब की पार्टी वालों का है।

श्री शाहनवाज खां : यह गलत बात है। मैं इस हाउस को बतलाना चाहता हूं कि जहां तक उत्तर प्रदेश में माइनर इरिगेशन का काम

है वह सारे हिन्दुस्तान में पहले नम्बर पर है। एग्रीकल्चर का जो काम है, वहां वह सब से आगे आ रहा है। इस वास्ते उत्तर प्रदेश के बारे में इस तरह की बातें कहना बहुत गैर-जिम्मेदारी की बात है।

श्री हुकम चन्द कछवाय (देवास): झगड़े करने में भी उत्तर प्रदेश सब से आगे है।

श्री सरजू पाण्डेय: अभी मंत्री महोदय ने बताया है कि उत्तर प्रदेश में कूए बने हैं। यह बात सही है। इस को मैं मानता हूं कि वहां कूंए बने हैं। माइनर इरिगेशन का वहां इंतजाम हुआ है। लेकिन माइनर इरिगेशन का फायदा किसान नहीं उठा पाता है। मैं मिसाल देता हूं। जिन लोगों ने कूंए बनवाये हैं वहां गलत वसूलियां हो रही हैं। हजारों मुकदमे इसके बारे में चल रहे हैं। वहां यह कहा जा रहा है कि यहां पर तुम्हारे यहां जितना पानी निकलना चाहिये था नहीं निकला है, इस नम्बर के कुंए के लिए या इस जगह के लिए तुम ने लोन लिया था, दूसरे नम्बर में क्यों बना लिया। इस वैज्ञानिक युग में इस तरह की बातों से काम नहीं चल सकता है। बिना वैज्ञानिक साधनों के काम नहीं आप कर सकते हैं। यह आपको मानना पड़ेगा। जहां तक ट्यूबवैल्स का ताल्लुक है सभी इस बात की मांग करते हैं कि हमारे यहां ट्यूबवैल लगाओ। सारे किसान यही मांग करते हैं कि हमारे लिए नहर बनवा दीजिये। उनकी इस मांग को हर एक मेम्बर को जब वह अपने निर्वाचन क्षेत्र में जाता है फेस करना पड़ता है। वे कुंओं की मांग करते हैं, यह नहीं कहते हैं कि गड्ढा खुदवा दो। इस वैज्ञानिक युग में माइनर इरिगेशन पर जो आप खर्च करते हैं, वह दूसरों पर करें।

मुझे जहां तक मालूम है, मैं आठ कुंओं के बारे में, आठ ट्यूबवैल्ज के बारे में आपको बता सकता हूं। वे वहां बेकार पड़े हुए हैं। और भी पड़े हुए होंगे लेकिन ये आठ तो मेरी जानकारी में हैं जो बेकार पड़े हुए है। एक का मैं आपको सारा हाल बता सकता हूं और आज ही आप जा कर जांच कर सकते है। आप मेरे साथ चल सकते है और मैं आपको दिखा सकता हूं। मेरपुर गांव के कंडासर स्थान में जहां के कांग्रेसी एम० एल० ए० है और जो गाजीपुर में हैं, एक ट्यूबवैल लगवाया गया। वह गुप्त जी की पार्टी के आदमी है। उनके कहने से वह लगवाया गया। इस आधार पर लगवाया गया कि वहां सिंचाई की जरूरत है। वह ट्यूबवैल कभी का वहां बन्द पड़ा है। पानी की वहां जरूरत ही नहीं है, इसलिए कि वहां सिंचाई के लायक जमीन ही नहीं है। यह मैंने आपको एक मिसाल दी है जिसका आप जा कर पता लगा सकते हैं, आया सही है या नहीं है।

मैं कहना चाहता हूं कि प्रोक्योरमेंट की जो आपकी पालिसी है इसको आप जबर्दस्ती लागू करेंगे तो किसानों का सहयोग आपको नहीं मिल सकता है। विरोधी पार्टी वालों से मिनिस्टर साहब ने अपील की है कि वे उनसे सहयोग करें। हम सब अन्न की समस्या को हल करने के लिए आपको सहयोग देने को तैयार है। विरोधी पार्टी वाले यहां केवल आलोचना की खातिर आलोचना करने के लिए नहीं बैठे हुए हैं। यह हमारा ध्येय नहीं है। लेकिन आप देखें कि सही मानों में कांग्रेस वाले क्या कहते हैं? वे भी वही बातें कहते हैं जोकि विरोधी दल वाले कहते है। सब से बढ़ कर आपकी आलोचना कांग्रेस वाले ही करते हैं। विरोधी पार्टियों का सहयोग आपको मिलेगा लेकिन अगर देश में अकाल और भुखमरी रहेगी तो विरोधी पार्टियों समेत सारी की सारी जनता के सामने दो ही रास्ते बच रहेंगे। एक तो यह है कि वह भूखों मरे या फिर आपके सिर पर चढ़े। तब आप खुद ही उसका मुकाबला करें। बिहार में क्या हुआ है। वहां विरोधी पार्टियां आन्दोलन करने के लिए नहीं गई थीं।

कुछ माननीय सदस्य: गई थीं।

श्री सरजू पाण्डेय : वहां पर चार हजार आदमियों को पकड़ कर आपने जेल में बन्द किया। आज भी वहां की जनता घास की जड़ें खा रही है। वहां विरोधी पार्टियां ने कोई आन्दोलन संगठित नहीं किया। आपको अच्छी तरह से मालूम है कि आपने चार हजार आदमियों को जेल खाने में डाल दिया केवल इसलिए कि वहां के आदमी ने रोटी की मांग की थी। एस० एस० पी० के लोग कम्युनिस्ट पार्टी के लोग, दूसरी पार्टियों के लोग सिर्फ यह कहने गये थे कि हमें खाना दो लेकिन वहां के मिनिस्टर ने उनसे मिलने से इन्कार कर दिया। यह क्या प्रजातंत्र है ? यह एटीट्यूड नहीं चल सकता है। क्यों नहीं लोगों के सामने आप मुंह दिखाते हैं ? क्यों आपमें हिम्मत नहीं होती है ?

मैं दो तीन बातें निवेदन करना चाहता हूं। पहला निवेदन तो यह है कि थोथे नारे आप बंद करें। अन्न खाने को लोगों को दें। दूसरी बात यह है कि इरिगेशन आप दीजिये। पानी आप दीजिये। आप नया एक्ट बनायें ताकि उन जमीनों पर कब्जा दिलाया जा सके जो वेस्ट लेंड्ज पड़ी हुई हैं और जहां पर खेती हो सकती है। पुराने एक्ट में आप तरमीम करें।

सिंचाई और विद्युत् मंत्रालय में उपमंत्री (श्री श्यामधर मिश्र) : कितनी वेस्ट लैंड पड़ी हुई है ?

श्री सरजू पाण्डेय : उत्तर प्रदेश में मैं जानता हूं कि वैस्ट लैंड है जो दी जा सकती है और जहां खेती हो सकती है।

तीसरी बात यह है कि जितने भी माइनर इरिगेशन के साधन हैं जितने भी आपके सिंचाई के साधन हैं उनको आप इस्तेमाल में लायें। नहरें बनी हुई हैं उन में पानी नहीं है इसकी तरफ आप देखें। जहां तक आपके अफसरों का सम्बन्ध है, जितना कहा जाए कम है। जो एग्जेक्टिव इंजीनियर है और जिस को आप खुदा समझते हैं वह सारे मुल्क को खा जाएगा। आपको भी खा जाएगा। हमें तो खा ही चुका है और अब आप ही की बारी है, आप ही का नम्बर है। वह महलों में बैठ कर आदेश देना ही जानता है। किसानों की आवाज वह नहीं सुनता है। अगर उसका इलाज नहीं किया गया तो हमें वह खा ही चुका है आपको भी खा जाएगा, हमें तो रात दिन वह तंग करता है इस वास्ते हम तो अपने घरों से निकलते ही नहीं हैं, कहीं जाते ही नहीं हैं लेकिन आप सावधान हो जायें। अगर कभी बड़ा रंज होता है तो ओवरसियर को बरखास्त कर देता है। जहां तक विकास खंडों का सम्बन्ध है, वहां जो रासलीला रचाई जाती है, इंद्रसभा होती है, उसको बन्द आप करें।

गाजीपुर में एक अफीम की फैक्ट्री थी जिस पर बहुत रुपया लगा हुआ था और जिस में दो ढाई हजार आदमी काम कर रहे थे, उसको अब नीमच ले जाने की तैयारियां हो रही हैं और वहां पर पांच लाख रुपया इसके लिए खर्च. . .

श्री उ० मू० त्रिवेदी (मंदसौर) : गाजीपुर और नीमच की यह बहुत ना-गवार बात कर रहे हैं।

श्री सरजू पाण्डेय : हमारा इलाका सब से गरीब है।

श्री उ० मू० त्रिवेदी : हमारा इलाका भी बहुत गरीब है।

श्री सरजू पाण्डेय : आप ले जाइये, हम मना नहीं करते हैं। अब वहां बहुत पुराने जमाने से है तो उसको क्यों ले जाया जा रहा है। सरकार सिर्फ पोलिटिकल कंसिडरेशंज के आधार पर उसको वहां से हटाना चाहती है।

मैं यह भी चाहता हूं कि जहां तक पूर्वी उत्तर प्रदेश का सम्बन्ध है पटेल आयोग की सिफारिशों को आप लागू करें। वहां पर

सिंचाई का प्रबन्ध करें, नहरें दीजिये,लोगों को खाने को दीजिये । वेस्ट लैंड्स पर ऐसे लोगों का कब्जा दिलाइये जो सही मानों में वहां खेती कर सकते हों । कोटा, परमिट, ठेका आदि पार्टी वालों से हटा कर उनके हाथों में दीजिये जो सही मानों में खेती करते हों, जो सही मानों में उनका इस्तेमाल खेती की उपज को बढ़ाने में कर सकते हों ।

Shri Manlyangadan (Kottayam): Mr. Chairman, the Minister has given a frank and objective assessment of the food situation in the country.

Mr. Chairman: I request the Congress Members to complete their speeches within 10 minutes so that I could call more Members.

Shri Manlyangadan: He has posed the problem before the country. According to me, this is not the time for criticism or fault-finding. There is a challenge and that challenge has to be met by the nation. There is drought on the one side and the difficulties of import on the other. What is needed is a changed outlook by all, leaders of public opinion, administration and the people as a whole. As the Minister rightly pointed out it is easy to make the present situation worse. Let not political ideologies be dragged in. Let there be no attempt to make capital out of the situation, whether it be political or monetary. Let that spirit of unity and national outlook which made us face the aggression on our frontiers prevail and enable the nation to face the challenge. Let us not forget that the enemies are watching what we are doing in the country. Whatever may be the outcome of the negotiations for import under PL 480, let us not forget that our honour is also involved in that.

Much has been said about this PL 480. I for one do not object to getting rice or wheat from America under PL 480, provided our honour is not sacrificed, and I am sure the honour of the country is safe in the hands of our Prime Minister and the Government. There is scarcity now and the prospects are that there is going to be more of it. The first and foremost thing to face the situation is to generate a feeling among the people that the people of one region are not suffering more than the people of another region. Whatever foodgrains are available in the country should be equitably distributed among the people, and they should be made available at reasonable cost. The distinction between the surplus and deficit States should go. India is deficit in food and the scarcity must be borne by the nation. If the so-called surplus States refuse to part with grains produced there, saying that they want a buffer stock of their own to meet future contingencies or create a situation by which their produce could be fetched only at a very exorbitant price, it is an anti-national act and that has to be condemned. Certain States are interested only in their own States and they ignore the national interests. I have only to say about them that little minds and great nations go ill together. What I say is that the impression of that kind should be removed. Otherwise, it will lead to the disintegration of the country. Whether true or not, the prevalance of the impression itself is bad and that has to be removed.

Kerala is a deficit State from the point of view of food. But it is not because the people there are idle or because any land is left waste or because no attempts are made in increase production there. Every inch of land is brought under cultivation. The agricultural commodities produced there fetch valuable foreign exchange and the nation is benefited. Such people who serve the nation by producing commodities useful for the nation have every right to ask for food materials produced in other parts of the country. It is not asking for charity. The patronising attitude of leaders of the so-called surplus State should be given up. The Government of India have evolved a national policy for production, procurement

[Shri Maniyangadan]

and distribution. If that has not been properly implemented, I am not prepared to blame the Union Minister for that. The States are not sincerely co-operating and some remedy should be found for this. If there is a proper atmosphere, which could be created only by all concerned, we can make the scheme a success and the targets could be achieved.

The Government's policy covers both longer-range and short-term policies on the food front. Now, new targets have been fixed and schemes for achieving the same have been formulated. The only solution is, higher production. The Prime Minister has given a slogan to the nation: "Jai Jawan, Jai Kisan". If we accept that slogan, we can meet the challenge and successfully meet the situation.

In this connection, the price of food materials produced by the agriculturists is important. It is true that a Price Commission has been appointed but in fixing the price have they taken into consideration all factors that go to constitute the cost of production? The Minister yesterday said, intervening when my hon. friend Shri Sreekantam Nair, that the price of paddy in Kerala is Rs. 42 to Rs. 43 which is higher than that prevailing in Madras and Andhra States. It is true, but I have to ask, has he any idea of the cost of production in Kerala. I have direct knowledge of cultivation in one part of Kerala called the Kuttaned area, though I do not own any land there. The Minister visited that place last year in a helicopter and at that time the area was fully under water. So, he could not have any correct idea of that area. I request the Minister to believe me that the price now fixed is not commensurate with the cost of cultivation in that area. Apart from the cost and price relationship, I have also to ask the Government one thing: suppose if the same land could fetch better income by cultivating other cash crops, can you ask the peasants to under go this sacrifice and ask them to cultivate only paddy there? All these aspects have to be taken into consideration in fixing the price.

Regarding procurement also, it is not done, at least in my State, as far as I know, on any scientific basis. There has been criticism from all quarters regarding this. It must be based on the yield and not on an acreage basis. In Kerala, I know—and I am sure in other parts of the country as well the same conditions prevail—there are areas where the production is one-third or even one-fourth of what is produced in other areas of the same State. But the procurement policy is based now on the acreage; one must measure so much per acre and so on. This aspect of the yield of land has not been taken into consideration. I summit that this aspect should be taken into consideration, and procurement should be on a scientific basis. I am not against procurement, but what I say is, it should be on a scientific basis.

Then, coming to credit facilities available to the cultivators the interest on loans availed of by the agriculturists from the co-operative societies is too exorbitant. The State Bank gives money to the Central Co-operative Bank in a State; they in turn give it to the district banks and then it goes to the primary bank. When it reaches the actual cultivator, I am told that the present rate of interest is more than nine per cent and what the State Bank gives is at three or 3 1/2 per cent. So, this enormous rate of interest now realised from the agriculturists should be reduced. Some way must be found for that.

Another point regarding the co-operative societies that I have to mention is, in Kerala, there is a rule—I think that such a rule prevails in some other States as well—to the effect that if there is defaults in paying back the money to the district bank, then no

further money will be made available to that primary society for giving loans. In an area which is served by one co-operative society, there may be people, one or two people, who may make default and the society may not be in a position to pay back the loan in time, but because of the default of one or two agriculturists, all the people in that area who are served by that co-operative society are suffering because they do not get any loan. This is a problem which seriously affects cultivation. I submit that something must be done in regard to that.

Then, with regard to concessions, I submit that concessions to ryots who lose by the failure of crops must be given. There must be some security against risk, for the cultivators.

Mr. Chairman: The hon. Member's time is up.

Shri Maniyangadan: I shall finish in a minute. I also submit that tax concession should be given as an incentive to agriculturists.

Regarding rationing in Kerala, I must submit that it is now six ounces of rice and four ounces of wheat, but there is a suggestion in a pamphlet recently circulated that it is likely to be reduced. As I said earlier, we are prepared to bear any burden along with the rest of India. But to ask us to do more than what others are asked to do is too much. I am prepared to go to the people and ask them to be content with what is available, but please remove the feeling of being discriminated against both in the matter of price and also in the matter of quantum.

Some hon. Members *rose*—

Mr. Chairman: Shri Jashvant Mehta—I would request hon. Members who desire to speak to catch my eye. (*Interruption*).

Shri P. R. Patel: For the last two days we have been trying to catch your eye.

श्री हुकम चन्द कछवाय : अध्यक्ष महोदय, पिछली बार अपना निर्णय . . .

An hon. Member: You have to stand up on the bench.

Shri P. R. Patel: Unless you go to the Chair......

Shri C. K. Bhattacharyya (Raiganj): Sir, let us be encouraged to feel that catching of eye will suffice.

Mr. Chairman: This is in addition to the other factors that will be taken into consideration.

Shri Jashvant Mehta (Bhavnagar): Mr. Chairman, Sir, yesterday the hon. Minister of Agriculture gave us a picture of scarcity in some parts of the country and how we are facing the food problem. In some States there is scarcity and the people are facing difficulty even in the matter of drinking water, and there is scarcity of fodder for the cattle.

Shri P. R. Patel: Looking to that picture it seems that 25 per cent of the people must die.

Shri Jashvant Mehta: The picture is a serious one and we have to face it, otherwise I am afraid the situation that was in Bengal will be repeated. We have to face it as we face our defence problem. Defence is the most important problem, and food is not less important than defence. We are talking of long-term and short-term policies for agricultural production. We have to face the present shortage, and also we have to face the deficit problem on a long-term basis.

Let us see how we are going to face this problem. Our main problem is of production, procurement and distribution. It demands the immediate attention of the Government. How are we going to face it?

First of all, the difficulty is, this problem is mixed up with politics—I mean politics of the States, party

[Shri Jashwant Mehta]

politics, politics of the politicians. In the beginning the emphasis was that we should not mix these problems with politics, but in reality the facts are different. Food should be free from politics. Even the States are bringing in politics in the matter of food. Surplus States are earning at the cost of deficit States. We must have a clear policy in this regard. Last year we were told that we are going to have farm-oriented policy, procurement policy. They were also discussed at the conference of the Chief Ministers. What we want is an implementation of these policies approved by Government. The difficulty is that the policy announced is not being implemented. The hon. Minister assured us that there will be farm-oriented policies, price support policies etc. He said that there will be procurement. But the States are not falling in line with the Centre. That is the politics that they are playing. Why should not the States fall in line with the Centre? I would request the hon. Prime Minister, when his stature has gone up as a result of our victory in the war against Pakistan, to compel the States to fall in line with the Centre. If the law does not permit it, if the Constitution does not permit it, we should change the Constitution. Otherwise, Sir, we will face a serious situation like what we had in Bengal and the people will die.

Shrimati Yasoda Reddy (Kurnool): The Minister stated that the States are co-operating with him. (*Interruption*).

Shri Jashvant Mehta: When we were faced with the Chinese aggression, when we were faced with the aggression from Pakistan, India rose as one man to fight them. Why we cannot rise as one man to tackle the food problem? Why should there be disparity in prices in different States, why should there be barriers and zones, why should there be surplus and deficit States and so on? There should be no surplus State and no deficit State; our approach should be, one country and one uniform policy for all.

Shrimati Yasoda Reddy: We should be Stateless, without any States.

Shri Jashvant Mehta: Compel the States to fall in line with the Centre. If we cannot do this, what is the use of having these policies. What we want is a national food policy in regard to procurement and distribution. Wholesale food trade all over the country should be abolished. No transport should be allowed to be utilised for foodgrains except with the sanction of the Government. No trucks, no trains, no ships should be allowed to be used by the profiteers and blackmarketeers in the country. There should be one uniform policy, and if the Government is serious about it they should implement this policy which should be considered as the national food policy.

If the Government accepts it in principle, what is the difficulty in implementing it? There should be efficiency in administration, at the State level and at the village level. We are told that we have organised the Food Corporation. Will the Government tell us in how many States the Food Corporation is functioning and how it is functioning? For the last twelve months we have been talking about the Food Corporation and State trading in food. Why is it that this Food Corporation has not been organised in the last twelve months in each State and in each district? What is the difficulty? When we have accepted in principle that there should be the Food Corporation, every village, every taluka and every State should have it and they should deal with the distribution of food and no other person should be allowed to interfere in distribution.

About production, the hon. Minister circulated a pamphlet. It gives idea of what the Government is doing

Even it has mentioned, what the Government has done in the last 15 years in the matter of irrigation, in the matter of better seeds, contour bunding and other things. All these things have been taken up by the Agriculture Ministry.

14.59 hrs.

[MR. DEPUTY-SPEAKER *in the Chair*]

But where do we stand in respect of rural credit? Let us see the figures of the Reserve Bank of India. We have not been able to supply rural credit 15 per cent requirements of the agriculturists. If we want to take rural credit to the villages, we should revolutionise the rural credit system. Agriculture is the basic industry. We should fix the creditworthiness of the agriculturists on the basis of their land value. There should be integration in the long-term, short-term and medium-term credits scheme. If we fix creditworthiness on the basis of the price of the land owned by an agriculturist, he can get credit on the value of his land by a simple procedure and there is no room for any corruption and delay. If we revolutionise the rural credit system in this way, we will be able to take this credit to the farmers.

15 hrs.

Then comes fertiliser. We are facing foreign exchange difficulty. The Finance Minister and the Minister of Agriculture do not come to an agreement on the matter of import of fertiliser. We should import fertiliser at any cost and supply it. The major projects are delayed because of politics. Why is it that the Centre is not taking any steps to ensure that there is no delay? Take, for instance, the Narbada Valley Project. Though it has been in the office files for the last fifteen years, no final decision has been taken in the matter for its implementation. If the Narbada Valley Project scheme is implemented, Madhya Pradesh, Rajasthan, Maharashtra and Gujarat will be benefited. Yet, it has not been implemented. Similarly, an hon. lady Member was yesterday referring to another project in Andhra which has been also delayed. If the States are not taking up those projects because of political differences, the Centre should take up the responsibility of financing and implementing such projects. If such a step is taken I have no doubt that we will be able to tide over the shortage of food. Since we have adopted a farmer-oriented policy in order to become self-sufficient in the matter of foodgrains, I do not know what is standing in the way of Government implementing that policy which it has adopted in principle.

Lastly, I want to say something about co-ordination. There is no co-ordination between the Ministries and there is no co-ordination between the Centre and the States. What are we doing in this matter? If we cannot co-ordinate our own policy, then we will not be able to deliver the goods. Once a principle is accepted, once a policy is accepted, then there should be no delay in its implementation. If there is delay, we will not be able to achieve our objective. I have made three or four suggestions about the directions in which Government should work to solve this problem.

The Food Ministry have circulated a paper on the problem of scarcity in which they have suggested certain measures which they are taking to solve this problem. I want to stress only one thing. Government should declare a moratorium on the cooperative credit which the agriculturists have taken in the scarcity areas, at least for one year, so that there will not be any pressure on the agriculturists to pay their dues. Unless that is done, I do not think the agriculturists will be able to do their best to increase production even if we give them other facilities.

डा० राम मनोहर लोहिया (फर्रुखाबाद) : उपाध्यक्ष महोदय, अड़तालीस करोड़ लोगों को भोजन मिले और भोजन न मिले और अकाल होता है तो इसकी जिम्मेदारी किस की है ?

एक माननीय सदस्य : वह आप के सामने बैठे हैं ।

डा० राम मनोहर लोहिया : नहीं, अगर वह अपनी जिम्मेदारी मान लें तो मामला आगे बढ़े । उनके मुहकमे से नवम्बर 1965 को जो हम को परचा भेजा गया है उसके अनुसार अकाल या दुर्भिक्ष संहिता में राज्यों की यह प्राथमिक जिम्मेदारी होती है कि अकाल की अवस्था में लोगों को खिलाएं पिलाएं । यह परचा हम लोगों को भेजा गया था । यह उस दुर्भिक्ष संहिता के अनुसार है जो कि अंग्रेजों ने बनायी थी, क्योंकि उस के अनुसार प्रदेशों की यह जिम्मेदारी होती थी । किन्तु हमारे संविधान की धारा 47 के अनुसार यह केन्द्रीय सरकार का प्राथमिक कर्त्तव्य हो जाता है । केवल फर्क इतना है कि अकाल संहिता जो अंग्रेजों ने बनायी थी उसमें "जिम्मेदारी" शब्द का इस्तेमाल किया गया है, और संविधान की धारा 47 में "कर्त्तव्य" शब्द का इस्तेमाल है वरना प्राथमिक कर्त्तव्य बिल्कुल इस सरकार का है, और ऐसा परचा भेज कर यह अपने कर्त्तव्य से भागना चाहते हैं । इसलिए पहली बात मुझे यह कहनी है कि अगर अकाल होता है, दुर्भिक्ष होता है, मौतें होती हैं, लोग नहीं खा पाते, तो यह केन्द्रीय सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारी हो जाती ह ।

उसी के साथ साथ मंत्री साहब ने सहयोग की अपील की । मैं भी चाहता हूं कि इस मामले में सब का सहयोग हो । लेकिन कैसे ? सब से पहले तो चीन पाकिस्तान की बात इस सहयोग से बिल्कुल निकाल देनी चाहिए, क्योंकि आप यह निश्चित समझ के रखें कि जब तक युद्ध चलता रहेगा उस समय अगर दुर्भिक्ष से लोग मरते हैं तो मेरे जैसे लोग गुस्सा करते हुएभी चप रहेंगे और समझेंगे कि जैसे कुछ लोग दुश्मन की गोली से मरे वैसे ही ये लोग दुर्भिक्ष से मर गए हैं । लेकिन जिस वक्त चीन या पाकिस्तान से युद्ध नहीं चलता रहेगा और अकाल होगा तो उस वक्त कोई और कार्रवाई करनी होगी, अगर सरकार ने अपनी नीतियां ठीक न कीं । वह कार्रवाई क्या होगी आप जानते ही हैं, अगर आप ने जो दुर्भिक्ष को हटाने के रास्ते हैं उनको न अपनाया तो ।

सब से पहली बात तो यह है कि सरकारी पार्टी को बहुत ज्यादा सावधान रहना चाहिए अपने वचनों के ऊपर । 1962 में चुनाव किस बात से लड़कर आप जीते ? सब से बड़ी बात थी सहयोगी खेती । सहयोगी खेती कांग्रेस पार्टी का मंत्र था और कुछ विरुद्ध पार्टियों का सहयोगी खेती के खिलाफ मंत्र था । अब चार बरस का समय बीत चुका है । जिस आधार पर 1962 का चुनाव जीते उसका परिणाम कितना निकला है आज वह सोचने की बात है। आज सारे देश में कितनी खेती हो रही है । कभी कहते हैं कि 31 करोड़ एकड़ में होती है कभी कहते हैं कि 33 करोड़ एकड़ में होती है । तो समझिए कि 32 करोड़ एकड़ में देश में खेती होती है । और इस में से ढाई लाख एकड़ भूमि में सहयोगी खेती होती है । इसका परिणाम यह आया कि एक हजार में से एक हिस्सा जमीन पर आप सहयोगी खेती करवा सके हो । तो मैं ने हिसाब लगाया है कि जब तक आप हजार चुनाव इस तरह की बात पर जीतोगे तब कहीं जाकर सहयोगी खेती कर पावोगे । तो जिस चीज को ले कर आप चुनाव जीते उस में इतनी जबरदस्त कमी दिखाई है कि अगर हिन्दुस्तान की जनता खेती से चेती हुई होती तो आपको तो बिल्कुल हटा देती, क्योंकि जिस सिद्धान्त पर चुनाव जीता करते हो उसको अपने कार्यकाल में कुछ तो अमल में लाने की कोशिश करनी चाहिये । मैं यह मान सकता हूं कि अगर अमल

में लाने में पचास प्रतिशत, चालीस प्रतिशत या साठ प्रतिशत की कमी रह जाए तो जनता माफ कर सकती है, लेकिन इस में तो उसका एक प्रतिशत भी आप हासिल नहीं कर पाए, हजार में एक हासिल कर पाए हो, तो ऐसी स्थिति में कैसे जनता माफ करेगी ?

Shri P. R. Patel: That was a small item in our election manifesto. Why are you referring to that?

डा० राम मनोहर लोहिया : कांग्रेसी हो कर ऐसी बात कर रहे हो । मालूम होता है अपनी पार्टी का मजाक उड़ा रहे हो वहां बैठे हुए । सहयोगी खेती को लेकर ही तो आपने चुनाव लड़ा था ।

दूसरी बात यह है कि इस समय रूस और अमरीका को लेकर यह सवाल बहुत ज्यादा गड़बड़ कर दिया जाता है । कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि सारी बहस पी. एल. 480 पर ही चली गयी । उस सम्बन्ध में मुझे कहना है कि मई-जून में जब श्री प्रधान मंत्री ने रूस को खुश कर दिया था कुछ बातों को कह कर के, तब मेरे पास रूसी और अमरीकी दोनों आते थे । रूसी बहुत खुश थे कि हिन्दुस्तान की नीति कुछ उन के अनुसार जा रही है । अमरीकी जरा दुखी और नाराज थे कि हिन्दुस्तान की नीति उनके खिलाफ जा रही है । वे लोग आए थे जुलाई के आस पास, जून में, और मुझ से मिले थे, तो मैंने कहा था कि इन्तिजार करो, नवम्बर-दिसम्बर आने दो । और रूसियों को मैंने कहा था कि जो इस वक्त खुशी दिखला रहे हो वह दुःख में परिणत हो जाएगी, और अमरीकियों से मैंने कहा कि, जो घबराए हुए थे, जब अनाज की कमी होगी और अनाज मांगने के दिन आएंगे तो आपकी हालत बदल जाएगी । तो इस लिए पहली बात मुझे यह कहनी है कि भारत सरकार को अपनी नीति कुछ मजबूत बनानी चाहिए और वक्त वक्त पर बदलते रहना और खास तौर से रूस और अमरीका के साथ, बहुत ही बुरा है ।

हमारे प्रधान मंत्री साहब अब कोसीजिन साहब से मिलेंगे और जानसन साहब से भी मिलेंगे । अगर इन दोनों साहबों को लोक-सभा के एक साधारण सदस्य की बात पहुंच सके तो मैं कहना चाहूंगा कि आप कोशिश मत करो कि भारत की विदेशी नीति आप में से किसी एक के पक्ष में और किसी दूसरे के खिलाफ जाए । यह बात मैं दोनों से कहता हूं । श्री कोसीजिन भी यही कोशिश करते हैं कि भारत की विदेश नीति रूस के पक्ष में अमरीका के खिलाफ जाये और श्री जानसन भी यही कोशिश करते हैं कि भारत की विदेश नीति अमरीका के पक्ष में रूस के खिलाफ़ जाये । दोनों की कोशिशें खराब हैं । उन को ये छोड़ देनी चाहिएं । क्योंकि अगर वे ऐसी ही कोशिश करते रहेंगे, तो उस का नतीजा यह होगा कि दुनिया की सब से गन्दी और भूखी बस्ती हिन्दुस्तान बन जायेगा, क्योंकि यहां के लोगों में अब वह दम नहीं रह गया है कि किसी नीति पर अड़ कर के चल सकें—वे हवा के झोके के साथ पलटते जायेंगे ।

इसलिए मैं इन दोनों को —अमरीका और रूस के सबल और सफल राजनीतिज्ञों को—कहना चाहता हूं कि अगर भारत के साथ और दुनिया के साथ कोई भी भलाई करना चाहते हो, तो दो-तीन काम करो । जहां तक अनाज देने का सवाल है, मैं यहां पर पी०एल० 480 या रूस की सहायता-योजना का जो कोई नाम होगा, उस के बारे में कुछ नहीं कहना चाहता हूं । जितना वे दे सकते हैं, दें । मैं यह जरूर कहूंगा कि हिन्दुस्तान के लिए यह शोभा नहीं देता कि वह ऐसे भिखमंगे की तरह मांगता रहे, जो जब तक मिले, तब तक कहे "अन्नदाता" और न मिले, तो गाली देना शुरू कर दे । यह बात अच्छी नहीं रहा करती है । मिले, तो अच्छा न मिले, तो भी ठीक तरह से चला जाये । लेकिन एक जरूरी बात है कि ये दोनों देश फ़ैसला करें कि भारत में सिंचाई के लिए पानी का इन्तजाम पूरी तरह से करना है । जितना भी हो सके, रूस और अमरीका

[डा० राम मनोहर लोहिया]

करें । मैं खाली रूस से नहीं, बल्कि रूस और अमरीका दोनों के लिए कह रहा हूं।

जैसे वहां से गेहूं मंगाया जाता है, वैसे नल, या मिट्टी काटने की मशीनें, कुएं बनाने की मशीनें, बिजली बनाने की मशीनें अगर पर्याप्त संख्या में रूस और अमरीका वाले हम को दें, तो ये अलबत्ता दुनिया का भला करेंगे और भारत को दुनिया की सब से बड़ी गन्दी बस्ती बनने से रोकेंगे । अगले सात बरस के अन्दर-अन्दर भारत की खेती को सिंचाई का पानी पूरी तरह से मिल जाना चाहिए। मैं समझता हूं कि अभी 32 करोड़ एकड़ में से 25 या 26 करोड़ एकड़ स्वर्ग-आसरे खेती है इस स्वर्ग-आसरे खेती को सिंची खेती बनाना रूस और अमरीका का प्रथम कर्त्तव्य है । यह बात मैं जानसन साहब और कोसीजिन साहब को कहना चाहता हूं, क्योंकि शास्त्री जी को कहते-कहते मैं थक गया हूं—उन पर कोई असर पड़ने वाला नहीं है ।

उर्वरक के बारे में मैं कहना चाहता हूं कि उर्वरक अच्छे हैं—जितने हों, ठीक है, लेकिन पानी नम्बर एक है, जिस पर ज्यादा जोर दिया जाना चाहिए । उसके अलावा जो कुछ भी पी० एल० 480 या रूस वाला हो, वह चलता रहे ।

लेकिन ये सारी बातें हो इसलिये नहीं पाती हैं कि इस समय भारत में सरकार नहीं है ।

श्री शिव नारायण (बांसी) : और क्या है ?

डा० राम मनोहर लोहिया : सरकार नहीं है ।

एक माननीय सदस्य : सामने है ।

डा० राम मनोहर लोहिया : मैं समझता हूं कि माननीय सदस्यों का दल, कांग्रेस पार्टी, कहीं ज्यादा जीवित है, क्योंकि मैंने सुना है कि लड़ाई के दिनों में कांग्रेस दल की कार्यकारिणी की प्रायः रोज बैठक हुआ करती थी और यह जो सरकार पन्द्रह आदमियों की है, इन की बैठक कहीं मुश्किल से हफ्ते में एक बार हो जाया करती थी । यह लड़ाई के दिनों की बात मैं कह रहा हूं । आप सब जानते हैं कि क्या हालत थी ? सरकार कहां है ? तब भी नहीं थी, इस वक्त भी नहीं है । लड़ाई के दिनों में सरकार संचालन नहीं कर रही थी । जो भी संचालन हो रहा था, बुरा या अच्छा, वह पल्टन के हाथों में था ।

उसी तरह इस समय कहना मुश्किल है कि अन्न के मामले का संचालन सुब्रह्मण्यम साहब कर रहे हैं या पाटिल साहब कर रहे हैं । क्या कभी सरकार की कोई बैठक होती है, जहां पर इस बारे में अच्छी तरह से बहस हो पाती हो ? मैं जानता हूं कि कई बार कैबीना के सदस्य बाहर आपस में बात नहीं किया करते हैं । लेकिन कैबीना के अन्दर बैठ कर कसम खानी चाहिए कि चाहे जितनी भी दुश्मनी हो, हम लोग आपस में बात करेंगे और नीतियां सिद्धान्त के आधार पर बनायेंगे । इस सम्बन्ध में मैं खाली रेम्जे मैकडानल्ड और स्नोडन का उदाहरण देना चाहता हूं, जो बिल्कुल जानी दुश्मन थे, लेकिन कैबीना में बैठ कर न सिर्फ एक दूसरे के साथ बात करते थे, बल्कि एक नीति के साथ चला करते थे ।

सरकार नहीं है, नीति नहीं है और जब तक सरकार और नीति नहीं रहेंगे, तब तक यह अनाज का मसला हल नहीं हो पायेगा । यही कारण है कि जब कभी यहां बहस होती है—यह रोग हम में, उन में, सब में आ गया है—, तो हम दो गिरोहों में बट जाते हैं । एक गिरोह है, जो अन्न निगम और दूसरी तरह की बातें करता है । अन्न निगम के लिए एक कसौटी मैं रखना चाहता हूं ।

हम जितने यहां लोक-सभा के सदस्य हैं, केवल एक किसी बात में, चाहे ज़मीन में, चाहे मकान में, चाहे कारखानों में, अपने लिए और अपने एक पीढ़ी तक के रिश्तेदारों के लिये राष्ट्रीयकरण का सिद्धान्त अपना लें, तब जितनी बातें यहां पर अन्न निगम की और राज्य के व्यापार की कही जाती हैं, वे कोई मतलब रखेंगी । यहां जितने लोक-सभा के सदस्य हैं, उनके और उनके एक पीढ़ी तक के रिश्तेदारों की सम्पत्ति है, ज़मीन की सम्पत्ति है, मकान की सम्पत्ति है या कारखानों की सम्पत्ति है, जब तक कोई एक श्रेणी की सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण इस लोक-सभा के सदस्यों द्वारा अपने और अपने एक पीढ़ी तक के रिश्तेदारों के लिए नहीं होता है, तब तक यह अन्न निगम वगैरह की बात करना बिल्कुल फ़िज़ूल हो जाता है ।

यहां पर राज्य-व्यापार के बारे में चर्चा की जाती है । मैं आपको बताऊं कि एक राज्य सरकार ने फरवरी से अगस्त, 1965 तक 42 रुपये तथा 52 रुपये क्विंटल के हिसाब से चना खरीदा और उसे 84 से 105 रुपये क्विंटल के हिसाब से बेचा । दूने दाम पर, 42 रुपये में खरीदा और 84 रुपये में बेचा । इतना मुनाफ़ा ! अगर आप चाहें, तो इस राज्य के ऊपर बिगड़ सकते हैं । यहां पर कई लोग बिगड़े भी । लेकिन जरा इस बात पर भी ध्यान दिया जाये कि यह मामला इतना गहरा है कि अपने देश में सब गरीब—मैं तो कहूंगा महा-गरीब— होते हुए भी उनमें कुछ ज्यादा गरीब हैं और कुछ कम गरीब हैं ।

यहां पर अन्न मंत्री साहब ने मद्रास और बंगाल की तारीफ की उन की नीति के सम्बन्ध में । मैं उनसे एक अर्ज करना चाहता हूं । एक तो वह थोड़ा राजनीतिक गुट को इस मामले में न लायें और दूसरे, जहां तक गरीबी का सवाल है, एक आंकड़ा मैं अभी उन को दे रहा हूं । अगर यह देखा जाये कि एक आदमी पीछे पिछले महीनों में लोगों ने कितनी चीनी खाई, तो आन्ध्र, उत्तर प्रदेश और बिहार में—मैं समझता हूं कि उड़ीसा भी इसमें होगा, क्योंकि उड़ीसा का अंक यहां पर मेरे पास नहीं है—वह चार किलो प्रति-व्यक्ति के नीचे है, बल्कि कुछ का तो तीन किलो है, जब कि गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब और बंगाल का अंक सात किलो से बारह किलो तक है ।

तो जब इन राज्यों की चर्चा हुआ करे और मंत्री साहब सचमुच कोई नीति बनाना चाहते हैं, तो वह याद रखें कि हिन्दुस्तान पूरे का पूरा गरीब है, लेकिन कुछ राज्य केवल खेती की अमीरी पर निर्भर करते हैं और थोड़ा बहुत पैसा इधर से उधर उनको मिल जाया करता है । अब आन्ध्र वाले को अगर आप कहेंगे कि तुम आ जाओ अन्न निगम में, तो वह कहेगा कि तुम तामिलनाड वाले तो बहुत ज्यादा पैसा मार रहे हो कारखानों में, हम आन्ध्र वालों को लूटना चाहते हैं । इस तरह की झंझट पैदा हो जाया करती है । उस तरफ़ भी मंत्री महोदय को ध्यान देना चाहिए ।

जब राज्यों की चर्चा होती है, तो वह इस बात पर भी ध्यान दें कि 42 रुपये का निकला हुआ चना जब 84 रुपये में बिकता है, तो उसमें कुछ लोगों को घूस और चन्दे का मौका मिल जाया करता है और जब तक चुनाव इस ढंग के होंगे, जैसे आज हैं, तब तक सरकारी पार्टी के सामने हमेशा यह बड़ा प्रलोभन रहेगा कि पैसा इकट्ठा करो, नहीं तो अगली दफ़ा खत्म । तो मंत्री महोदय की नीति नहीं चल पायेगी । यह जो इतनी जबर्दस्त लूट हो रही है—42 रुपये में खरीद कर 84 रुपये में बेचना—उसका एक मुख्य कारण घूस और चन्दा है ।

श्री क० ना० तिवारी : वह तो सब पार्टियों पर लागू है ।

डा० राम मनोहर लोहिया : हम सरकारी नहीं हैं। जब हम सरकारी हो जायेंगे, तब हमारे लिए कहना। अभी तो नहीं है। अभी तो हम किसी को कुछ दे नहीं सकते। तो हमको कोई क्यों देगा ? अभी तो आपको देगा, सुब्रह्मण्यम् साहब को देगा, औरों को देगा। हम को क्यों देगा ?

आप इस बात पर फ़ैसला करवाये कि क्या भारत में आजकल—और प्राय: हमेशा—मृत्यु भोजन के न मिलने के कारण होती है या नहीं। इसके ऊपर हमेशा बहस चला करती है। सरकार हमेशा यह कह कर छूट जाती है कि कोई मरा नहीं है। मैं आपको याद दिलाऊं कि जब बंगाल में चालीस, पचास लाख आदमी मरे थे, तब अंग्रेजों ने जो कमीशन बिठाया था, उसमें भी यह बात लिखी गई थी कि किसी एक डाक्टर ने नहीं कहा कि एक आदमी भी बिना खाये मरा है, क्योंकि ऐसा कोई डाक्टर है ही नहीं, जो ऐसा कह सकता है। जो मरता है, वह या बुख़ार से मरता है, या पेचिश से मरता है, या और किसी कारण से मरता है, लेकिन वे सब बिना खाये मरते हैं। मैं आपसे विनय के साथ कहना चाहता हूं कि हमारे यहां हर साल करीब चालीस लाख आदमी असमय मरा करते हैं। चालीस लाख आदमी कैसे कह रहा हूं। आप देखें कि यूरोपीय देशों में हजार पीछे दस आदमियों की मृत्यु होती है साल भर में। हमारे यहां हजार पीछे 19 और 20 आदमियों की मृत्यु होती है। चालीस लाख की असमय मृत्यु होती है। वे समय के पहले मर जाते हैं। अगर आप चाहते हैं कि यूरोपीय मृत्यु की दर हमारे देश में रहे तो आपको उनके जैसा खाना, उनके जैसा भोजन, उनकी जैसी तन्दुरुस्ती और स्वास्थ्य यहां के लोगों को देना होगा। अगर ऐसा होता तो यहां पर चालीस लाख आदमी जो ज्यादा मर जाते हैं हर साल वे न मरते। ये आदमी बिना खाये या कम खाए मरते हैं। यह एक विषय है जिसको मैं आपको थोड़ा सा विस्तार में बतलाना चाहता हूं। आप समझते हैं कि यहां एक भी नहीं मरता है इस कारण से। आप समझते हैं कि अगर कोई मरता है तो खाली उपवास से मरता है। उसी को आप मौत समझते हैं। अकाल मृत्यु उसी की होती है जो आदमी खाना छोड़ दे, जैसे जैन मुनि लोग खाना छोड़ देते हैं या कोई आदमी व्रत रख लेता है और खाना छोड़ देता है और उसके कारण से उसकी मृत्यु हो जाती है। यह बिल्कुल अलग चीज है। भोजन के अभाव से जो मृत्यु होती है वह दूसरी किस्म की है। एक तो होती है कम खाये और एक होती है बिन खाये। जहां तक कम खाए का सम्बन्ध है मैं समझता हूं कि करीब-करीब छ:, सात लाख आदमी हर साल कम खाए मर जाते हैं और बिन खाए मरते हैं और आज भी मर रहे हैं, दो, चार पांच लाख। हो सकता है कि कभी-कभी इनकी तादाद बीस-पच्चीस लाख तक चली जाती हो या चली जाए या और भी ज्यादा हो जाए। इसमें ऐसा होता है कि दो दिन खाने को नहीं मिला, फिर चार, छ: छटांक मिल गया, एक दिन नहीं मिला, फिर एक या दो या तीन या चार छटांक मिल गया। ऐसे आदमी चार, पांच महीनों के अन्दर मर कर रहेंगे। ऐसे आदमियों को आप कहेंगे कि वे बिन खाए नहीं मरे तो मैं कहूंगा कि वे बिना खाए मर गए हैं। ऐसे लोगों की मृत्यु की तादाद अपने देश में बढ़ती चली जा रही है। मृत्यु को तो आप छोड़ दें लेकिन अब लोग इस कारण से आत्म हत्यायें तक करने लग गये हैं। अपने बीवी-बच्चों को लेकर जबर्दस्त तादाद में आत्म-हत्यायें उनकी बढ़ रही हैं, क्योंकि खाना नहीं मिल रहा है। खाने के मामले में आप मेहरबानी करके एक मेरी और बात पर ध्यान दें।

इस वक्त आप समझते हों कि सात- साढ़े सात छटांक औसत पड़ता है। जब तक इस औसत को और आबादी को विभिन्न वर्गों में अलग-अलग आप नहीं बांटेंगे कोई नतीजा

नहीं निकल पाएगा । पंचवर्षीय योजनाओं के आधार ऐसे है कि कुछ लोगों का भोजन तो बढ़ेगा और कुछ का भोजन घटेगा । इसका कारण यह है कि औसत तो बढ़ नहीं रही है जिस तरह से आबादी बढ़ती रही है । उसी आबादी में हो रही बढ़ोतरी के हिसाब से आप अपनी जमीन को बढ़ा पाते हैं, उस से अधिक नहीं । उससे अधिक पैदावार भी नहीं बढ़ रही है । इस वास्ते औसत ज्यों का त्यों रहता है । वही साढ़े सात छटांक प्रति व्यक्ति औसत रहता है । नतीजा होता है कि पंचवर्षीय योजना के कारण जो उद्योगीकरण होता है, जो लोग मजदूर बनते हैं, जो लोग रिक्शा चलाते हैं, जो लोग पलटनों में भरती होते हैं उनकी तादाद जब बढ़ती है तो वे 6–7 छटांक से 8–10 छटांक चाहते हैं । फिर जो लोग दो, चार या पांच छटांक वाले होते हैं वे घट कर तीन, साढ़े तीन छटांक खाना शुरू कर देते हैं ।

आपके मिनिस्टर साहब जब दो, चार दिन पहले मुझे मिले तो उन्होंने मुझ से पूछा कि कैसे जान गये थे कि नवम्बर-दिसम्बर में अकाल होगा । तब मैंने उनसे कहा था कि नवम्बर-दिसम्बर में अकाल होगा या जून-जुलाई में होगा यह तो हर एक आदमी कह सकता है जो थोड़ा-बहुत अर्थ शास्त्र जानता है । हालांकि मैं आपसे कहूं सुब्रह्मण्यम् साहब कि अगर आपका भाषण मैंने दिया होता तो शायद मैं भारत सुरक्षा नियमों में पकड़ कर जेलखाने में बन्द कर दिया गया होता कि तुमने मुल्क में बड़ी घबराहट फैलाई है, चारों तरफ तुमने अकाल की बात कह कर लोगों को एक दम से घबरा दिया है । लेकिन अच्छा हुआ आपने अपने भाषण में यह बात बता दी । इस वक्त मैं बता रहा हूं कि जब तक आपका मौजूदा आधार बना रहेगा तब तक इस पंचवर्षीय योजनाक्रम में पांच, दस करोड़ लोग तो आपके पांच-छः या सात छटांक से नौ-दस छटांक पर पहुंचेंगे और 38 करोड़ लोग घट कर चार छटांक या पांच छटांक या तीन, साढ़े तीन छटांक तक पहुंचेंगे ।

इसलिए यह मेरी भविष्यवाणी है कि जब तक आपकी सरकार की मौजूदा नीति चलती रहती है तब तक इस देश में दुर्भिक्ष प्रतिवर्ष हुआ करेंगे । खाली फर्क यह है कि उसमें दस लाख मरते हैं या एक लाख मरते हैं या पांच लाख मरते हैं ।

कल से मैं जिससे भी मिला हूं यह सवाल पूछ रहा हूं कि अगर आप अन्न मंत्री होते तो क्या करते । अपने मित्रों से, साधारण आदमियों से, प्रोफेसरों से, सभी से मैं यह सवाल पूछ रहा हूं कि तुम अन्न मंत्री होते तो क्या करते । कुछ का जवाब होता कि हम सब नियंत्रण हटा लेते, जितने भी प्रान्त से प्रान्त में अन्न की लाने-ले जाने के नियम हैं उन सबको खत्म कर देते, अनाज को बिल्कुल मुक्त कर देते । कुछ का जवाब होता कि हम उगाही [ही] करते, पूरी तरह से वसूली करते, पूरी तरह से राशनिंग चलाते । ये दो तरह के जवाब मुझे मिले । कुछ जरूर ऐसे थे जो कि दुविधा वाले थे । इन दोनों के जवाब मैं कल से सुन रहा हूं । इन दोनों जवाबों में आज देश बंट गया है । इसका नतीजा होता है कि बुनियादी बात सामने नहीं आ पा रही है । इनदो समूहों की एक बुनियादी बात आप पकड़ कर रखो, कि कोई भी तरीका सफल नहीं हो सकता जब तक कि पैदा और दाम की भी उसी के साथ-साथ व्यवस्था आप नहीं रखेंगे किसी न किसी रूप में । मैं कामचोर वाले आदमियों में से नहीं हूं जो यह कहूं कि कामचोर पर चढ़ा दो फिर चाहे व्यापार मुक्त करो या सरकार के हाथ में व्यापार ले लो । दो बातें निहायत जरूरी हैं । एक तो दीर्घकालीन सिंचाई जो अभी मैंने कहो कि मुफ्त सिंचाई पूरी 26 करोड़ एकड़ के लिए । हमारे देश के प्रधान मंत्री जी महाराज ने अपने कुछ दिन पहले के एक भाषण में कुछ बातें कही थीं । लेकिन वह भाषण बोर है, कमजोर नहीं है । दूसरी बात है कि अनाज और कारखानों के दामों में अनुपात कायम किया जाए और उस दाम के

[डा० राम मनोहर लोहिया]

संतुलन को जो तोड़ता है उसको सजा भी जाए, फिर चाहे वह सरकारी आदमी हो, मंत्री हो या व्यापारी हो ।

एक आखिरी बात मैं कहना चाहता हूं । यह जो मैं कहने जा रहा हूं बिल्कुल निश्चित बात है । आप समझ कर रख लें । इस में छिपाने की कोई बात नहीं है और न मैं आपको कोई धमकी दे रहा हूं । बहुत मुसीबत में हम लोग हैं । कई जगह वसूली हो रही है किसान से । जिस किसान ने धान बोया तक नहीं है उस किसान से धान की मांग की जा रही है । कई जगहों पर जबर्दस्ती हो रही है । एक तो यह जबर्दस्ती और दूसरी तरफ अगर दुर्भिक्ष और अकाल पड़ा, तो वैसे मौके पर चुप बैठे रहना हमारा काम नहीं होगा । जब तक सरकार अपनी नीतियां नहीं बदलती है तब तक यह निश्चित बात है कि अगर कोई इस सच्ची नीतियों के ऊपर चलना चाहता है तो उसका यह धर्म हो जाता है कि वह इस सरकार को खत्म करे और लोगों को कहे कि अकाल पड़ने से पहले, भूख से मरने के पहले जाओ मंत्री और अफसर के घर और उनसे कहो कि हमें खाने को दो, तब तुम खाओ । जब लोगों को खाने को नहीं मिलेगा तो यह बात होकर रहेगी । इसमें जरूर संकट है । मेरे पास कुछ लोग अभी आए और उन्होंने कहा कि देखो हमारी बात उठाओ । मैंने पूछा, आपका नाम क्या है, तो उन्होंने नाम नहीं बताया । डर के मारे नहीं बताया । सरकारी नौकर हैं, बहुत जबरदस्त डर है । शायद उसी डर की बुनियाद पर आप लोगों को इतना घमंड है । यह घमंड न करो । भारत की जनता का डर भी कभी टूट सकता है, जैसे उसका धीरज टूट रहा है और उस वक्त जो मैंने कहा है अभी, वतवा होकर रहेगा ।

श्री म० लि० सहगल (जंजगीर) : खाद्य पदार्थों को लेकर आज जो स्थिति हमारे देश में पैदा हो गई है, उस पर आज यहां चर्चा हो रही है । मैं मध्य प्रदेश की इस सम्बन्ध में कुछ चर्चा करना चाहूंगा । मध्य प्रदेश को सालाना विभिन्न प्रकार के अन्नों की किस मात्रा में जरूरत है, उसका थोड़ा सा विवरण मैं आपके सामने रखना चाहता हूं । इससे हाउस को पता चल जायेगा कि दरअसल में मध्य प्रदेश सरपलस है या डिफिसिट है । डोमेस्टिक कंजम्पशन के लिए बीज के साथ-साथ चावल और गेहूं की करीब-करीब 19 लाख मेट्रिक टन की हमें जरूरत पड़ती है । इसके साथ-साथ जब नार्मल इयर हमारा होता है, जिस साल स्थिति अच्छी होती है, पानी की व्यवस्था ठीक होती है, पानी बराबर पड़ता है, तब हम बराबर सरप्लस रहते हैं । इस में दो रायें नहीं हैं । आज हमारे मध्य प्रदेश में हालत यह है कि वहां चौबीस जिले ऐसे हैं जहां पर अकाल है, और उन में से दो कमिश्नरियां ऐसी हैं छत्तीसगढ़ में, रायपुर और बिलासपुर, जहां से हम लाखों टन अन्न भेजा करते थे बाहर को । लेकिन हमारे यहां के आंकड़े मंत्री महोदय के पास हैं उन से मालूम होता है कि बहुत सी जगहों पर तो रुपये में चार आना फसल भी हमें नहीं मिलेगी । इसलिये इन चीजों को देखते हुए मैं आप से कहूंगा आप हमारे यहां के प्रोडक्शन के फिगर्स को देखें । वह फिगर्स मैं आप के सामने रख रहा हूं जो कि सन् 1962–63, 1963–64 और 1964–65 के हैं और लाख मीट्रिक टन्स में हैं :

	1962–63	1963–64	1964–65
चावल	23.56	33.31	34.26
गेहूं	21.53	16.74	14.28
ज्वार	15.24	13.30	17.28
मेज	4.66	6.03	5.51
बाजरा	1.35	1.26	1.40
ग्राम	8.34	7.85	6.81

इन सारी चीजों को देखते हुए मैं आप से अर्ज करना चाहता हूं कि हमारी स्टेट को जरूरत कितनी है । स्टेट के लिये चाहे हम राशनिंग करें चाहे फेयर प्राइस शाप्स खोलें, मध्य प्रदेश को करीब-करीब । लाख मीट्रिक टन इम्पोर्टेड ह्वीट की जरूरत होगी और 1 लाख मीट्रिक चावल की जरूरत होगी ।

अब मैं आप को बतलाना चाहता हूं कि हमें मिला क्या । हमें 1964 में 1 लाख 57,000 मीट्रिक टन इम्पोर्टेड ह्वीट मिला । इसके अलावा 1965 में 35,000 मीट्रिक टन इम्पोर्टेड ह्वीट मिला । इसी तरह से 1964 में हमें चावल मिला 9,000 मीट्रिक टन और 1965 में मिला 2,000 मीट्रिक टन ।

इसके बाद आप देखिये कि सेंट्रल गवर्नमेंट ने जो प्रोक्योरमेंट किया है वह कितना है । उसने 1963–64 में 1.88 लाख मीट्रिक टन चावल प्रोक्योर किया । 1964–65 में उन्होंने करीब 4.2 लाख मीट्रिक टन चावल खरीदा । इन सारी चीजों को देखने के बाद आप देखिये कि गवर्नमेंट आफ इंडिया की तरफ से सन् 1963–64 में 1.29 लाख मीट्रिक टन चावल का प्रोक्योरमेंट लेवी के तौर पर हुआ और उसके बाद 2.49 लाख मीट्रिक टन महाराष्ट्र और गुजरात को व्यापार बताने की दृष्टि से भेजा गया । इस तरह से यह सब मिला कर 3.77 लाख मीट्रिक टन हो गया ।

हमारे यहां 1678 फेयर प्राइस शाप्स हैं । यदि उनके होते हुए हम से कहा जाता है पूरे स्टेट के सम्बन्ध में कि हम सप्लस है तो मैं ज्वार के बारे में भी आप को बतलाना चाहूंगा । हमारे यहां जब फसल अच्छी होती है तब हम ज्वार और चने में थोड़ा सप्लस हो जाते हैं । जब हमारे यहां गेहूं कम होता है तब यही ज्वार और चना अधिक मात्रा में खर्च होता है । उस को इस्तेमाल करने के बाद जो एक्स्ट्रा ज्वार बच जाती है उस को हम उन जगहों में भेज देते हैं जो कि डेफिसिट होती हैं । हमारे स्टेट के हिसाब-किताब को देखने से पता चलेगा कि हम ने कुल 54,000 मीट्रिक टन खरीदा । उसमें से केन्द्र के हुक्म के मुताबिक हम ने 10 हजार टन महाराष्ट्र को भेज दिया और 40 हजार टन गुजरात को भेज दिया ।

इन सारी चीजों को बतलाने के बाद अब मैं कुछ भावों के सम्बन्ध में बतलाना चाहूंगा । गवर्नमेंट आफ इंडिया के हुक्म के मुताबिक स्टेट गवर्नमेंट ने ह्वीट, पैडी ज्वार, बाजरा और मेज केजो भाव 1964–65 के लिये मुकर्रर किये वह इस प्रकार थे :

(1) पैडी :

कोर्स	35.00 रु० पर क्विंटल
मीडियम (2)	36.75 रु० पर क्विंटल
मीडियम (1)	38.15 रु० पर क्विंटल

(2) ह्वीट :

रेड वेराइटी	45.50 रु० पर क्विंटल
कामन वेराइटी	49.50 रु० पर क्विंटल
सुपीरियर वेराइटी	53.50 रु० पर क्विंटल

(3) कोर्स ग्रेन :

ज्वार	38.00 रु० पर क्विंटल
बाजरा	40.00 रु० पर क्विंटल
मेज	36.00 रु० पर क्विंटल

इन सब बातों को देखते हुए मैं इरिगेशन मिनिस्टर साहब से कहूंगा कि वह जरा गौर करें । आज हल्दी प्रोजेक्ट से आप लोगों को पानी नहीं देते हैं । मैं कहता हूं कि अगर आप पानी की व्यवस्था कर दीजिये तो जो हमारी सप्लस डिस्ट्रिक्ट्स हैं वहां से हम बराबर जो भी शार्टेज वाली स्टेट्स हैं उन को अन्न दे सकते हैं । इस के लिये हम नहीं, नहीं करेंगे । लेकिन जब तक इरिगेशन फैसिलिटीज नहीं होती हैं तब तक कुछ नहीं हो सकता है । हमारे इरिगेशन मिनिस्टर साहब ने बहुत सी

[श्री प० सिंह सहगल]

जगहों पर जा कर देखने के बाद इरिगेशन की व्यवस्था की । इसके लिये मैं उन को बधाई देता हूं लेकिन बधाई देने के साथ साथ उन से यह अर्ज करूंगा कि आप हमारे हस्दो प्रोजेक्ट को पहला दर्जा क्यों नहीं लेना चाहते हैं । आखिर हम से आप चाहते हैं कि हम देश को अन्न दें तो उस अन्न के लिये आप को पानी की व्यवस्था भी करनी चाहिये । आप की जो दूसरी प्रोजेक्ट्स हैं वह मल्टी परपज प्रोजेक्ट्स है । वह सिंचाई के उतने ही काम आ सकती हैं ।

इसी तरह से अगर आप चाहते हैं कि बिलासपुर तहसील में ज्यादा पैदावार हो तो आप को अपर प्रोजेक्ट को भी हाथ लेना चाहिये । इसी तरह से बिलासपुर अगरहाफ प्रोजेक्ट पर भी गौर कीजिये । हमारे प्रदेश के दक्षिण में जो जो भी स्टेट्स है वहां चूंकि पानी की व्यवस्था है इसलिये वह हम से दूनी और तिगुनी क्राप्स ले रहे हैं । क्या अगर हमारे यहां पानी की व्यवस्था हो जाये तो हम भी उसी तरह से अच्छी क्राप्स आप को नहीं दे सकते हैं । जरूर दे सकते हैं । लेकिन इसके लिये जरूरी है कि हमारे यहां जो फैमीन कंडिशन्स इस वक्त बनी हुई हैं उन में रिलीफ वर्क्स को खोला जाये । रिलीफ वर्क्स के साथ वहां पर आप आदमियों को खाना दें । साथ में जो तकावी लोन्स आप ने दिये हैं जो बेचारे काश्तकार उन को वापस नहीं दे सकते हैं उन के ऊपर हमें सहृदयता से और मनुष्य के नाते विचार करना पड़ेगा और व्यवहार करना पड़ेगा । ताकि वहां के लोगों के साथ हम कोई किसी किस्म की और जबरदस्ती न करें और हमारा कार्य हो । हमारी स्थिति आज कर्ज लेने से बहुत ही भयानक है, हमारे काश्तकार भाइयों को और इसलिए काश्तकार हरदम मनी लैंडर्स के पास जाता है । मैं अपने कृषि मंत्री महोदय से प्रार्थना करूंगा कि आप इस बात को सोचिये कि जो बड़े बड़े बैंक्स हैं, उन बैंकों के जरिये से, जो कोआपरेटिव बैंक्स हैं उनके जरिये से आप इंडिविजुअल लोन्स दें । आज तो बात असल यह है कि सहकारिता के आधार पर हम जितने भी लोग हैं वह शामिल हों तभी पया पा सकते हैं । इसलिए इंडिविजुअल लोन पर भी आप को विचार करना है ।

आखिरी शब्द में यह कहूंगा कि यह जो स्मात होल्डिंग्स हैं, मैं एक खुद काश्तकार हूं और मैं खुद 150 एकड़ में खेती करता हूं लेकिन आज मेरी यह हालत है कि मेरे पास में कोई भी ऐसी चीज नहीं है । क्योंकि मेरे यहां अन्न नहीं हुआ है तो बीज के लिए भी मेरे पास कुछ नहीं है, तो वह क्या कर सकेंगे यह तो हम लोगों की हालत है जो कि खेती करते हैं । इसीलिए खाद के बारे में फर्टिलाइजर्स कोरबा में लगाना चाहते हैं जिससे कि छत्तीसगढ़ को ही फायदा नहीं होता सारे प्रान्त को फायदा होता, लेकिन वह भी पता नहीं कब लगेगा, इसका निर्णय आप लेंगे ।

मैं आप से यह भी कहूंगा कि अनुसन्धान का जो कार्य आप कर रहे हैं, आपकी जो फार्मिंग है, उसको देखकर के हमें देखना पड़ेगा कि किस तरह से हम आगे बढ़ सकते हैं । अन्त में एक शब्द कह कर बन्द करता हूं कि आप के जो डिपार्टमेंट हैं, कम्यूनिटी डेवलपमेंट है, इरिगेशन है, फूड डिपार्टमेंट है, इनको तो आप इस तरह से बांधिये जिसमें एक दूसरे से कन्धा मिला कर चल सकें । यदि हम अलग अलग रास्ते जायेंगे तो कामयाबी नहीं कर सकते । इसलिए मैं आग्रह करूंगा कि आप इस चीज को बारे में जल्द पहलेकर के काम करें और इसी में हमारी कामयाबी है ।

Shri Hanumanthaiya (Bangalore City): Sir, today, I am not making a speech formulating proposals to relieve the great crisis that has arisen in this country. That requires probably longer time and greater seriousness of approach. Today I feel like speaking after I heard on the

rushing the necessary amount of foodstuffs to Mysore to help people who are affected by scarcity conditions; I felt very happy and I felt like thanking the Government of India. It is therefore that I have summoned courage enough to speak today. The southern part of Mysore from which I hail never knew what scarcity conditions were in human memory. In fact when other parts of the country suffered from famine we had plenty of rain and food crops. My grantfather used to narrate that about ninety years ago there was a famine and lot of people died. Sir M. Visveswarayya has written a biography of his. He mentions this famine. It seems there a number of people died and bodies were scattered in the streets, in the villages and the towns. Similar things would have happened today. But the world conscience is such today that it has evolved to a certain level, certain height, I suppose, that no country will look on with equanimity when people in other countries die of hunger. Whatever our leaders may say, that we want aid with strings or without strings, these are irritating phrases; these are phrases that emanate from haughty hearts. This is the time when we have to feel humble. when we have to make the other nations of the world feel that here is a country which needs their sympathy, help and assistance. It is not a question of a beggar laying down conditions. Whether our leaders formulate phrases in this irritating manner or not, the world is bound to help us and it will help us. Therefore, there is no need for us to get frightened over these things. If there is no such help we are bound to lose, not 5,000 people or so—the casualties we suffered on the western front during our recent conflict with Pakistan—but 5 crores of people who will die of hunger in India. That is the position we are facing today. We have to so formulate our foreign policies that we have to give up this 18-year old repetition of those formal phrases which have brought more anger from many a nation against us than mellifluous attitude. All the time, we repeat the same words and phrases for the last 18 years, and it is time that we changed them. If we want aid or help without strings, we must be conscious in saying so; that we are having our own strings in getting help from others. This is a kind of perverse psychology. On the other hand, if you say that we need so much help and that people are dying, then, it appears as proper frame of mind. That is necessary. That will be of much help, in order to get help from abroad.

I shall make only two or three suggestions pertaining to the scarcity areas. Relief measures should be immediately taken up. My hon. friend the Minister of Irrigation knows that nearly two years ago, the Members of Parliament from Mysore sat in a conference, and the late Shri Dasappa, although he was a Cabinet Minister, was present at the meeting. All of us unanimously requested that a particular minor irrigation project may be taken up in the Bangalore district, the project called Manchanavele project. The Minister also agreed, but it has not yet reached the stage of even administrative sanction. This is the way we are proceeding in our governmental work. The reason, I do not want to state here, because this is too serious a situation for us to accuse one another. I do not want to do it today.

This project will serve not only as a future protection against famine and scarcity conditions but it will immediately provide people with relief work. So, this work must be immediately taken up. That is my request to the hon. Minister for Irrigation and Power.

The Minister of Irrigation and Power (Dr. K. L. Rao): What is this project?

Shri Hanumanthaiya: It is in Bangalore district; Ramavaram Taluk. Your predecessor, Hafiz Muhammad Ibrahim, had sanctioned it.

radio that the Central government is

[Shri Hanumanthaiya]

Next, I make a personal appeal to the Food Minister to see how anomalous the position is regarding pulses. In Punjab and Rajasthan Bengal gram sells at about Rs. 50 per quintal. The same stuff is sold at about Rs. 200 in Mysore. I have received this letter from Shimoga. If there is free movement, if people are not able to get rice or ragi or other grains, they can at least eat these pulses.

The Minister of Food and Agriculture (Shri C. Subramaniam): There is no restraint on pulses.

Shri Hanumanthaiya: I am speaking subject to correction. The letter says, "Need for removal of movement restriction on pulses."

Shri C. Subramaniam: There is no restriction on the movement of pulses.

Shri Hanumanthaiya: If there is no restriction, I am very happy.

Shri Sinhasan Singh (Gorakhpur): On gram, there is restriction.

Shri C. Subramaniam: I agree that on gram there is movement restriction but not on pulses.

Shri Hanumanthaiya: That is a distinction without much difference.

Mr. Deputy-Speaker: Is not gram a pulse?

Shri C. Subramaniam: Because gram is used as a cereal in Uttar Pradesh, Bihar and Punjab and other places, they wanted it to be classified as a cereal and be left with them and be moved on a controlled basis, but as far as other pulses are concerned, there is absolutely no restriction.

Shri Hanumanthaiya: Therefore, the truth of my statement is partially admitted by the hon. Minister. Gram is a very substantial food in our part of the country. Many a time a kilogram of gram would be able to maintain a family for a day or two. There it is a substantial food, a nourishing food, and I want restriction to be removed throughout India so far as Bengal gram is concerned.

Shri K. N. Tiwary: Not only Bengal gram, Punjab gram also.

Shri Hanumanthaiya: All kinds of gram.

Another suggestion I could make is this. I have been watching this food problem being discussed, being evolved, being implemented for the last 18 years. I was a member of the Provisional Parliament also. Ever since that time the same proposals have been there. Whatever the present Minister has formulated and adumbrated in his speech here and elsewhere, the same suggestions have been made, discussed and approved before. It is only at the stage of implementation that it has failed. I am very happy, the hon. Food Minister has very frankly and very courageously pointed out the administrative deficiencies. It is, in fact, this administrative deficiency that is responsible for the present situation—it is not so much planning, it is not so much the formulation of policies. If, as they say, food has to be tackled on a war basis, do we really implement it—that very phrase, "tackling it on a war basis"? In the days when we were fighting with Pakistan every one of us was on his toes. The Cabinet formed a sub-committee. The Prime Minister was constantly in charge of day-to-day developments. If this food problem, the biggest problem which in the most tragic way is facing us to day is to be solved, the food portfolio should be taken by the Prime Minister and the food portfolios in the States must be taken by the Chief Ministers. Secondly, all the IAS and ICS people must be kept away from anything concerned with food and agriculture people who know about agriculture, namely, departmental people, engineers and technicians must be made responsible for

this work. A sweet-speaking Secretary in the Secretariat, either here or there, manages to become the Director in charge of food production. What incentive can these technical people have if a generalist comes and sits over their heads? He has neither the necessary knowledge the necessary psychology, nor the necessary vision in that particular field. The first and foremost thing that is to be done is to keep these IAS and ICS people away from the field in which they are not proficient. Then, the so-called Director of Agriculture—because he has that background of agriculture—must be made really responsible for agricultural production. If he is not able to deliver the goods within a particular period he must be dismissed. The psychology of "war basis" is that you go and lay down your life in the war front. It is only when you are prepared to lay down your life that you will be able to win a battle. You cannot keep your body intact and yet kill the enemy and win the war.

Shri C. Subramaniam: At least we should lay down our office!

Shri Hanumanthaiya: At least these people who are Directors of Agriculture and their subordinates and, even if it comes to that, the concerned ministers, must be told that they should lay down their offices, if they are not able to fulfil their pledge within three years or so.

श्री तन सिंह (बाड़मेर) : माननीय उपाध्यक्ष महोदय, मूल प्रस्ताव रखते हुए माननीय कृषि मंत्री महोदय ने बताया था कि हमारे यहां अन्नाभाव और अकाल का मुख्य कारण वर्षा का अभाव है। लेकिन मैं निवेदन करूंगा कि वर्षा कोई एक ऐसा नया कारण तो नहीं है। देश की जलवायु किसी पार्टी विशेष के कारण परिवर्तित हो गयी ऐसी भी बात नहीं है। जैसे हमारे देश की जलवायु पहले थी वैसी ही आज है और भविष्य में भी वैसी ही रहेगी, और यदि अन्न संकट के सम्बन्ध में हम वर्षा के अभाव के कारण को लेंगे तो उस का तो कोई अन्त ही नहीं होगा, विशेषतः हमारे आजादी प्राप्त करने के 18 साल बाद जब कि हम अपनी आर्थिक योजनायें बना रहे हैं। 15 वर्ष से हमारा आर्थिक नियोजन चल रहा है, फिर भी अगर वर्षा पर हम आधारित रहेंगे और तकनीकी ज्ञान और वैज्ञानिक प्रयोगों के बाद भी हम वर्षा और बाढ़ का कोई नियंत्रण न कर सकेंगे, तो हमारी योजना का कोई अर्थ नहीं है।

मैं तो यह कहूंगा कि 15 वर्षों से लगातार करीब करीब प्रति वर्ष लोक सभा में अन्न संकट पर और बाढ़ पर बहस होती रही आया करती है। जब कभी भी ऐसी परिस्थितियां पैदा होती हैं उस समय हम कुछ अस्थायी कार्य अपने हाथ में लेते हैं और थोड़ी सी राहत मिलने के बाद बेखबर हो जाते हैं। नतीजा यह होता है कि इस समस्या का कोई स्थायी हल नहीं मिल पाता और प्रति वर्ष यह समस्या बढ़ती जा रही है।

हमारे देश में एक योजना आयोग का गठन हुआ, और उस के सम्बन्ध में बताया जाता है कि सारे देश का संतुलित विकास इस आयोग द्वारा हो रहा है। मुझे खेद है कि यह आयोग न तो इस देश की जनता के प्रति उत्तरदायी है, न इस लोक सभा के प्रति उत्तरदायी है। आज तक 15 वर्षों के बाद भी यदि वह बाढ़ नियंत्रण न कर सका, अति वृष्टि के मामले को ठीक प्रकार से सुनियोजित न कर सका तो मैं नहीं जानता कि यह योजना आयोग क्या कर रहा है। केवल औद्योगिक उत्पादन के दृष्टिकोण से योजना आयोग ने यदि हजारों करोड़ रुपया खर्च कर दिया है और कृषि की निपट उपेक्षा की है, तो औद्योगिक उत्पादन पर भी उस का कुप्रभाव पड़े बिना नहीं रहेगा।

अभी अभी एक पूर्व वक्ता ने बतलाया था कि अन्न के मामले में राजनीति का

[श्री तन सिंह]

प्रयोग नहीं होना चाहिए । मैं निवेदन करूंगा कि संसार में बहुत से ऐसे देश हैं जैसे इजराइल, जहां की जलवायु और परिस्थितियां राजस्थान के समान हैं । लेकिन उस देश ने बहुत थोड़े समय में अपने तकनीकी ज्ञान और वैज्ञानिक प्रयोगों से बहुत उन्नति की है । हम ने अरब राष्ट्रों को संतुष्ट करने के लिए ही इजराइल से दौत्य सम्बन्ध स्थापित नहीं किए हों, किन्तु हमारे देश की बहबूदी के लिए उन के इस प्रकार के तकनीकी सहयोग में क्या बाधा पड़ती है ? और यदि यह राजनीति नहीं है तो मैं नहीं जानता कि इस प्रकार के देशों से हम लाभ क्यों नहीं उठा पाते ।

और राजनीति का एक और उदाहरण दूंगा । सिंदरी में खाद का कारखाना बनाया गया है और उस के लिए जिप्सम आता है राजस्थान से । जो जिप्सम खान पर पांच रुपया और सात रुपया पर टन पड़ता है वह सिंदरी पहुंच कर 39 और 43 रुपया प्रति टन पड़ता है रेल भाड़े के कारण । सिंदरी कारखाने में वही खाद बन जाने के बाद वापस राजस्थान में लाया जाता है तो उस का मूल्य तीस और 35 रुपया प्रति टन और बढ़ जाता है । यदि यह राजनीति नहीं है तो यह योजना आयोग की कौन सी सूझ बूझ है कि कच्चा माल तो राजस्थान में हो रहा है और कारखाना बनाया जा रहा है बिहार में, कच्चे माल को वहां पहुंचाने और वापस तैयार माल को लाने में 60 रुपया प्रति टन उस पर उत्पादन का बोझ पड़ जाता है । मैं तो यही कहूंगा कि योजना आयोग की सूझ बूझ के कारण ऐसा हो रहा है, तो निश्चय ही उस की सूझ बूझ के पुर्जे ढीले है ।

यदि अनावृष्टि का हम स्थायी रूप से मुकाबला करना चाहते है तो हम को नहरों का जाल बिछाना पड़ेगा । अभी खेद है कि हमारी समूची भूमि में केवल 20 प्रति शत भूमि ऐसी है जहां सिंचाई होती है । राजस्थान नहर योजना के लिए बड़ा शोर मचा है । उस का स्वर कांडला तक पहुंच गया है लेकिन उस में पानी सूरतगढ़ तक भी नहीं आया है ।

16.00 hrs.

राजस्थान सरकार ने बहुत पूर्व भारत सरकार से निवेदन कर दिया था कि राजस्थान नहर का जो आर्थिक दबाव है वह उसे सहन नहीं कर सकती । उस के पास इतने आर्थिक साधन नहीं हैं, इसलिये भारत सरकार को इस कार्य को अपने हाथ में ले लेना चाहिये । न जाने भारत सरकार के किन विभागों में राजस्थान नहर योजना के लिये इतनी सुस्ती आई जिस के कारण इतने वर्ष इस का निर्णय करने में लग गये, और आज भी मुझे सन्देह होता है कि भारत सरकार के इस निर्णय के उपरान्त राजस्थान नहर परियोजना शीघ्रता से पूर्ण हो जायेगी । इस नहर का महत्व इतना ही नहीं है कि वहां अन्नोत्पादन की न्यूनतायें हट जायेंगी बल्कि इस का प्रतिरक्षा की दृष्टि से भी बड़ा महत्व है । आप जानते हैं कि अभी भारत और पाकिस्तान के संघर्ष के बीच, हम यह यदि मान भी लें कि हम लाहौर पर आक्रमण करना नहीं चाहते थे तथापि यह बात छिपी नहीं है कि उस के बीच में इच्छोगिल नहर ऐसी थी जिस को पार करना हमारे सैनिकों के लिए आसान काम नहीं था । यदि हम इस बारे में विचार करें तो राजस्थान और पाकिस्तान के बीच में लगभग 600 मील लम्बी एक ऐसी सीमा है जो प्राकृतिक सीमा रेखा नहीं है, और इस देश के बचाव के दृष्टिकोण से यदि इस नहर का युद्ध स्तर पर निर्माण किया जाये और जो कि रामगढ़ तक आने वाली है उस को कुछ और लम्बा किया जाये, सौ या सवा सौ मील और लम्बा किया जाये, और गहरा बनाया जाये, तो यह नहर केवल हमारे अन्नोत्पादन में ही योगदान नहीं दे सकती बल्कि हमारे देश

के लिये यह एक प्राकृतिक सीमा रेखा का भी काम कर सकती है और वहां के सारे साधनों का भी हम ठीक प्रकार से उपयोग कर सकते हैं ।

मेरा विश्वास है कि प्रतिरक्षा विभाग और कृषि विभाग के बीच समन्वय की बड़ी आवश्यकता है । शंकर समिति ने बहुत पहले यह दृढ़तापूर्वक सिफारिश की थी कि कृषि, सामुदायिक विकास और सिंचाई विभागों के लिए एक यूनिफाइड कमान्ड होनी चाहिये । जिस प्रकार रक्षा मंत्रालय में वायु सेना, जल सेना और स्थल सेना के अतिरिक्त उत्पादन और सम्भरण विभाग है, फिर भी वह स्वयं अपने अन्दर एक सेल्फ कंटेन्ड रक्षा मंत्रालय है, उसी प्रकार यदि हम स्थायी तौर पर अपने अन्न संकट को हल करना चाहते हैं तो इन विभागों के बीच में एक यूनिफाइड कमान्ड होनी चाहिए और उन में समन्वय और सन्तुलन होना चाहिये ।

राजस्थान में जब पिछले वर्ष अकाल पड़ा था उस समय कृषि मंत्री महोदय ने सदन को आश्वासन दिया था कि उसी वर्ष ढाई सौ नलकूप वहां खोदे जायेंगे, लेकिन मुझे खेद के साथ निवेदन करना पड़ रहा है कि उन ढाई सौ नलकूपों में से केवल 125 तक ही बन सके हैं । आप अनुमान चाहे जो बना लें और उस के वास्ते चाहे जितने व्यापक आंकड़े आदि दिखा दें, लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि हम इन आश्वासनों, आशाओं और विश्वासों के आधार पर कितने अर्से तक लोगों को गुमराह कर सकते हैं । यदि यह कहा जाता है कि राजस्थान सरकार ने नलकूप योजनाओं के लिये स्थान निश्चित नहीं किये थे तो इस की जिम्मेदारी किस पर है, यह मैं समझ नहीं पा रहा हूं ।

अभी बहुत सी बातें इस विषय में भी कही गई कि केन्द्रीय सरकार के पास कृषि विभाग होते हुए भी कृषि मूलतः राज्य सरकार का विषय है, और इस में राज्य सरकार में और केन्द्रीय सरकार के बीच में पूरा समन्वय नहीं है । केन्द्रीय सरकार की नीतियों को राज्य सरकारें ठीक प्रकार से निभा नहीं पातीं, उस की नीतियों को वह ठीक प्रकार से आगे नहीं ला पातीं जिस के कारण इस समस्या के अच्छी तरह से हल होने में असुविधा रहती है । लेकिन यह जिम्मेदारी किस पर है । यह वक्तव्य उन्हें बजाय लोक सभा में देने के अपनी कांग्रेस पार्टी में देना चाहिये क्योंकि राज्य सरकारें अभी उसी पार्टी की हैं । यदि यह नहीं हो सकता है तो चाहे कुछ भी करना पड़े, चाहे संविधान में संशोधन ही करना हो या और किसी प्रकार की प्रक्रिया स्वीकार करनी हो, वह हमें करना चाहिये । हम यह नहीं चाहते कि हमारे देश में अन्न का संकट इसी प्रकार बना रहे और उस के मार्ग में राज्य सरकारें राजनीति के वश या अपनी स्वाभाविक आरामतलबी की वजह से रोड़ा बन कर खड़ी रहें ।

मैं आप को एक ऐसा दृष्टान्त देना चाहता हूं । हमारी केन्द्रीय सरकार ने राजस्थान के जेसलमेर क्षेत्र में नलकूप बनाये थे सन् 1954 में । उन नलकूपों में लगभग 50 हजार गैलन पानी प्रति घंटा आ सकता था । लेकिन आप को यह जान कर आश्चर्य होगा कि सन् 1964 तक उन नलकूपों के अन्तर्गत पड़ने वाली जमीन का आवंटन अथवा अलाटमेंट नहीं हुआ । यदि हम लाखों रुपये एक नलकूप पर खर्च कर सकते हैं और व्यापक रूप में हमारी सरकार नलकूप खुदवा सकती है और नौ वर्ष तक राजस्थान में नलकूपों का आवंटन रुका रहता है तो भारत सरकार को अवश्य ध्यान देना चाहिये कि गड़बड़ी कहां है । या तो कानून में गड़बड़ी है या व्यवस्था में गड़बड़ी है । प्रशासनिक व्यवस्था जो है उस की आलोचना न करना ही ठीक है । मैं अब भी निवेदन करूंगा कि सन् 1954 में नलकूप खुदे जिन का आवंटन नहीं हुआ है । परन्तु अब भी नलकूप खोदे जा रहे हैं जहां जमीन का बटवारा नहीं हो रहा है और इस

[श्री तन सिंह]

लिये जो सिंचाई के साधन उपलब्ध किये जा रहे हैं उन का पूरी तरह से उपयोग नहीं हो रहा है। यदि सरकार यही कहती रहेगी कि यह जिम्मेदारी राज्य सरकार की है तो मैं निवेदन करूंगा कि केन्द्रीय सरकार भी इस उत्तरदायित्व से बरी नहीं हो सकती।

किसी देश के बड़े होने के कई लाभ हैं। उस का सब से बड़ा लाभ यह है कि देश के किसी कोने में यदि अतिवृष्टि हो या अनावृष्टि हो तो उस देश के दूसरे भागों में बचा हुआ धान्य उस जगह से जा सकता है। इस दृष्टिकोण से हमारा देश सौभाग्यशाली है कि वह बहुत बड़ा देश है किन्तु दुर्भाग्य से सरकार की गलत नीतियों के कारण इस एक देश के कई टुकड़े हो गये है। देश में दो दो बड़े राज्यों को मिला कर के कुछ इस प्रकार की क्षेत्रीय व्यवस्थायें बना दी गई हैं जिस के कारण अन्न एक स्थान से दूसरे स्थान को वैधानिक रूप से नहीं ले जाया जा सकता। नतीजा यह होता है कि चोरबाजारी और छिपे छिपे अनाज के ले जाने की कार्यवाइयां हो रही हैं। हम चाहे जितने जागरूक हों, हमारी सरकार का पुलिस विभाग भी चाहे जितना जागरूक हो, लेकिन वह सब के सब चोरों को नहीं पकड़ सकता है। नतीजा यह होता है कि एक स्थान पर जहां बोर्ड के ओर पश्नोते लोग ज्यादा नफा उठाते हैं उस में अन्न के भावों में आंशिक रूप से वृद्धि हो जाती है।

खेतों की खरीद के एकाधिकार का तरीका भी खतरे से खाली नहीं है क्योंकि, मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है, हमारे देश में औद्योगिक उत्पादन के लिये और औद्योगिक विकास के लिये जितना महत्व दिया जा रहा है उतना दुर्भाग्य से कृषि उत्पादन के लिये नहीं दिया जा रहा है। इस का परिणाम यह है कि किसान की हालत उत्तरोत्तर खस्ता होती जा रही है। यदि किसान को अपनी भूमि पर, अपनी कृषि पर उपयुक्त और पूरा लाभ नहीं मिलता तो उस की रुचि कृषि में नहीं रहेगी और उस का परिणाम सारे देश को भोगना पड़ेगा।

आप ने नीति निर्धारित की कि देश में भूमि की अधिकतम सीमा निश्चित कर दी जाये। राजस्थान में इस सीमा निर्धारण से पहले सरकार की ओर से एक इस प्रकार का सर्वेक्षण हुआ था जिस के द्वारा यह प्रतिवेदन प्रस्तुत हुआ कि राजस्थान में इस प्रकार के किसी भी अधिनियम की आवश्यकता नहीं है और भूमि की अधिकतम सीमा निश्चित करने की कोई आवश्यकता राजस्थान में नहीं है। लेकिन सरकार की ओर से यह बताया गया कि क्योंकि योजना आयोग ने इसे एक राष्ट्रीय नीति के रूप में निश्चित कर लिया है इसलिये अधिकतम सीमा का निर्धारण अनिवार्य है। श्रीमन्, जब किसी किसान पर भूमि की एक अधिकतम सीमा निर्धारित हो गई तब उस के बाद जो उस के स्वामित्व का बोझ उस जमीन पर पड़ेगा और दबाव पड़ेगा उस के कारण उस भूमि से उत्पादन की क्षमता घटती जायेगी और भूमि से प्राप्त होने वाला लाभ धीरे धीरे घटते हुए समाप्त हो जायेगा। यदि खरीद का एकाधिकार सरकार को दिया जाता है तब उस समय किसान के पास में और कोई विकल्प नहीं है कि वह अपना एक निश्चित जो लाभ है उस निश्चित लाभ के अन्तर्गत अपने अन्न को बेच डाले। मैं यह निश्चय पूर्वक कहता हूं कि इस देश में नारे तो किसान के बारे में बहुत कुछ लगाये जाते हैं लेकिन किसान और कृषि इस देश में बहुत उपेक्षित रही है। मैं नहीं जानता कि अब इस तरह के अन्न संकट के बाद में यही स्थिति बनी रहेगी लेकिन अब तक किसान उपेक्षित रहा है और शहर और गांव का भेद इतना बढ़ गया है कि कोई भी आदमी गांव में रहना इतना पसन्द नहीं करता जितना कि शहर में रहना पसन्द करता है और उस का मुख्य कारण यह है कि भूमि से

होने वाली और रोजगार धन्धों से होने वाली आमदनी में या शहर में नौकरी या दूसरे व्यवसाय से जो आमदनी होती है उस में बड़ा अन्तर है। शहरों का आकर्षण इतना विलक्षण और इतना गहरा आकर्षण है कि जिस के कारण गांव एक तरह से खाली से हो रहे हैं, गांव एक तरह से अपंगित से हो रहे हैं। उद्योग और कृषि का भेद ही वास्तव में इस के मूल में है और यदि सरकार इस समय अन्न के वितरण में भी, राशन में भी इसी भेद को जीवित रखना चाहती है तो बलिहारी है इस सरकार की। श्रीमन्, गांव का आदमी और शहर का आदमी एक ही देश का नागरिक होने के नाते अपने स्वभाव में, और अपने भोजन की पद्धति में कोई विशेष अन्तर नहीं रखता लेकिन हमारे प्रशासक ऐसे भी हैं और मैं विशेषकर अपने जिले का उदाहरण दूंगा कि जहां गांवों में गेहूं नहीं जाता केवल शहर के लिये ही गेहूं है। मैं मानता हूं कि गांवों में बहुत से लोग बिना गेहूं के चला सकते हैं किन्तु इस का अभिप्राय यह नहीं है कि गेहूं को बिल्कुल ही वहां आवश्यकता नहीं है। यदि हमारी राशन पद्धति में भी गांव और शहर का हम भेद बनाते हैं तो फिर हम किस बूते पर यह उम्मीद करते हैं कि हमारा कृषक इस देश को बलवान और मजबूत बनाने में सहयोग दे सकेगा।

श्रीमन्, अभी हमारे प्रधान मंत्री महोदय ने बड़ा आकर्षक नारा दिया है—जय जवान, जय किसान का। अच्छा होता कि आज के समय में सिपाही को और किसान को एक बराबर स्थिति में रखते, नारे के रूप में नहीं बल्कि व्यावहारिक रूप में। एक उदाहरण मैं देना चाहता हूं। रिहन्द का एक सरकारी बिजलीघर है जहां से एल्यूमिनियम फैक्ट्री को उद्योगपति बिजली के एक यूनिट के लिये केवल तीन पैसे देता है जब कि हमारा किसान जिस के लिए हमारे प्रधान मंत्री जय जवान और जय किसान का नारा देते हैं, उस को 19 पैसे प्रतियूनिट देना पड़ता है। . . (व्यवधान) आज ही प्रश्नोत्तर के समय में सिंचाई मंत्री ने बताया था कि हम ने ऐसा कोई आश्वासन नहीं दिया था कि उद्योगपतियों को दी जाने वाली बिजली और किसानों को दी जानेवाली बिजली की दर में समानता रखी जायेगी। आश्वासन नहीं दिया गया था तो भी कोई विशेष बात नहीं है और यह आश्वासन आज भी नहीं होगा, और भविष्य में भी नहीं होगा। केवल इतना सा बताया गया कि हम उन को सहायता कर सकते हैं। मेरी समझ में नहीं आता है कि औद्योगिक उत्पादन के लिये जब आप एक उद्योगपति को तीन पैसे प्रति यूनिट दे सकते हैं तो किसान को देने में क्या अड़चन पड़ती है और यदि अड़चन पड़ती है, नहीं दे सकते तो फिर किसान का नारा, जय जवान और जय किसान का नारा व्यावहारिक बातों पर खड़ा हुआ नहीं बल्कि यह केवल एक तरह का ऊपरी और दिखावा मात्र है।

श्रीमन्, समय के अभाव में मैं बहुत ही संक्षेप में अपनी अन्तिम बात कहता हूं। 1956 में हम ने पी० एल० 480 के मुताबिक 7 मिलियन टन का समझौता अस्थायी तौर पर इसलिए किया था कि हमारी स्थिति भविष्य में स्थिति सुधर जायेगी लेकिन सन् 56 के बाद से लगातार आज तक द्रौपदी के चीर की तरह से यह बढ़ती जा रही है और इस के रुकने की कोई संभावना नहीं है। मेरा मतलब यह नहीं है कि इस को बन्द कर दिया जाय। परन्तु जब तक हम व्यापक रूप से काफी सिंचाई के साधन उपलब्ध नहीं करते तथा इस सम्बन्ध में बहुत शक्तिशाली और प्रभावशाली कदम नहीं उठाते, जब तक किसान की हालत सुधारने के लिए भूमि पर उस के स्वामित्व का अधिकार संविधान के सत्रहवें संशोधन द्वारा जो कर दिया गया है, वह अधिकार उस को नहीं दिया जायगा, उस को सहायता और तरीकों से नहीं मिलेगी तब हम चाहे जितना ही और जगायें अन्न की समस्या ठीक होने की सम्भावनायें हमारे यहां बहुत ही कम हैं।

श्री के० डी० मालवीय (बस्ती) : मिस्टर डिप्टी स्पीकर, सर . . . .

श्री हुकम चन्द कछवाय : हिन्दी अच्छी जानते हैं आप तो ?

श्री के० डी० मालवीय : उपाध्यक्ष जी, कल मैं ने बहुत गौर से अपने मित्र सुब्रह्मण्यम साहब का बयान यहां सुना। कई बार पहले भी पिछले सालों में ऐसी ही समस्या खाने की हमारे सामने रही। तब भी ऐसे ही सुनने का मौका मिलता था और हम सब को चाहिये भी कि हम उन के बयानों को बहुत गौर से सुनें । क्योंकि वह जिम्मेदार वक्तव्य है, सोचने समझने के बाद हमारे सामने इस भवन में रखा जाता है और उन के विशेषज्ञ उन्हें सही माने में सलाह भी देते होंगे। उन्हों ने खाने की एक बड़ी खतरनाक तस्वीर हमारे सामने रखी है ।

Mr. Deputy-Speaker, the gloomy picture really has caused great concern to us, more especially because it has come from our Minister....

Dr. L. M. Singhvi (Jodhpur): It is unfair for him to draw applause when he speaks both in Hindi and in English alternately.

Mr. Deputy-Speaker: That is for the Members.

Shri K. D. Malaviya: Is there anything wrong in my speaking both in Hindi and in English?

श्री हुकम चन्द कछवाय : हिन्दी बड़ी मीठी लगती है आप की ।

उपाध्यक्ष महोदय : दोनों मीठी हैं ।

श्रीमती लक्ष्मीकान्तम्मा : हिन्दी में ही कहिए न ।

Shri K. D. Malaviya: I have only ten minutes at my disposal. As I said, more especially when such statements have come from our able Minister, it should cause us great concern. He is one of our ablest Ministers and therefore, whatever comes from him, deserves our great consideration and attention.

Shrimati Lakshmikantham ma: When we are thinking of depending more and more on ourselves, why should he speak in English?

Shri K. D. Malaviya: I wish to assert my right to speak in English. I do not wish to underestimate or take a very light view of the situation that confronts us by referring to personal aspects of things. I told him yesterday that a report of a speech of mine made in Nagpur was incorrectly reported in the press where is said that if Shri Subramaniam was replaced by a man like me, I would perhaps solve the food problem I wish to inform my friend that I never made such a statement because I do not take a light view of the serious situation that confronts us. I know that we have come to a situation where it is no use our repeating details of implementations and the problem of irrigation, fragmentation of holdings, consolidation of land, and this and that now. We have reached a stage when perhaps Shri Subramaniam, myself and some other friends who might think that we can solve the problem, all put together and circumscribed by the limitations of the framework under which our Government is working today, will not be able to solve this food problem.

Year in and year out we have been hearing the same arguments, the answers, charges and countercharges, complaints, allegations, of our inability to do a think and all that. Almost all these speeches could have been made ten years earlier, and the same replies could have been given ten years earlier. Therefore, this effort to strike a middle course has proved a failure, is going to prove a failure, and will always meet with failure so long as we are not deeply conscious of the fact that we have to examine

and revise our working policies, and implementation, in a more basic way. I personally feel that the middle-course way will not do for us. Perhaps even Shri Maaani, who represents an extreme view and is diametrically opposed to the views that are held by men like me, may have some relevant purposive directions to put before us.

Shri Shinkre (Marmagao): They advocated collective farming.

Shri K. D. Malaviya: He may not succeed, he will not succeed I know, but sometimes I feel that we are getting chances and losing time in following the middle course. State trading and private trading, procurement and no procurement, co-operatives and joint-stock companies, ceiling on land and no ceiling on land, concession charges of electricity to agriculturists versus concession charges of electricity to industrialists, community development is a good thing versus community development is a bad thing—all these things are going on, and I can multiply the examples and illustrations, and will have come to the conclusion that there is something seriously wrong in our thinking, and I should take courage to state this fact here that unless we revise our thinking, we are not likely to succeed.

Shri A. P. Sharma. Is it about food?

Shri K. D. Malaviya: I am referring to the question of food. I agree that there has to be no doctrinaire approach about the problem of food. On the question of import of foodgrains through the P. L. 480 arrangement. I do not wish to say anything, except to refer to certain views expressed by some American friends who are well-wishers of this country, who are not particularly opposed to the socialistic pattern of society that some of us wish to propagate here, although they might be opposed to my own particular specimen of the socialist programme. Even they have come to the conclusion that, indefinitely, such sort of continuous aids are not likely to do good to the agricultural programme of production of this nation. Therefore, I feel that this dependence on PL 480 and the manner in which certain sections in the government are contemplating today is grossly unjust and inconsistent with the slogans raised recently after the Indo-Pakistan conflict-slogan of self-reliance. Either we wish to go ahead with the programme and strategy of self-reliance and take courage and face the better consequences of it for sometime in a transitional way or we do not repeat this slogan. There is generally no harm in the programme of importing foodgrains from abroad. I wish to state that we have failed to increase production in our country because of certain basic reasons. So long as our production per unit of land is lower than the lowest in the world, I object to the fundamental strategy of this nation to depend upon importing food through PL 480. Even the American friends will agree with us that this continuous and unlimited way of depending upon PL 480 to bridge over temporary difficulties is not good for us. Therefore, this slogan of self-reliance came to us at a very proper time. I regret to say that the statements made by certain sections of the government with regard to the import of food and the desire of certain ministers and certain sections of the Planning Commission are contrary to the spirit of self-reliance. It is time that we made up our minds on this. If we follow the socialist principles to which we are dedicated and committed in the great political party to which we all have the honour to belong, and if we implement these socialist principles, I have no doubt that this problem of food will be solved. But if we do not follow these principles and do not implement them and keep them before us as our targets and objectives to be followed at some more convenient time or think that we can do it when we are strong enough to do them, then to that extent our food production programme will be diluted

[Shri K. D. Malaviya]

and we will go on indefinitely trying to catch up with our objective, but we will never catch up with it. We are unprepared for the proper distribution of food and we shall continue to be like that so long as we leave the initiative to others. It is regretable that we are not prepared to take the lead to create an organisation for proper distribution. The statistics put before us will not help. My hon. friend said yesterday that rains have failed up very badly; according to him, perhaps never in living memories it was so. I do not know if the the situation is really so gloomy. With regard to the last kharif crop in the nothern part of India, the situation certainly does not appear to be gloomy from the facts that I have. In an entire district near my constituency responsible people have told me that they had produced maize in the last karif and have no recollection of such an abundant crop in living memory. I am referring to the district of Gonda where maize had been produced in an abnormally satisfactory way. In the western part of my State, I enquired from my colleagues here in Parliament, from Members of Parliament, and they tell me that the last rabi crop, was very good; maize was good; the kharif crop was good. Even in my own district which was considered to be poor, the earlier rice crop was very good. So, to maintain that the prospects are abnormally bad, black, and never as they were, is wrong and this assessment might have to be revised.

With regard to rainfall also, I do not think we are organisationally spread over in that satisfactory manner throughout the country, that we can get the correct assessment of rainfall. In the same State, in one region of the State, there are different reports coming about the satisfactory or the unsatisfactory nature of the rainfall. What is, therefore, necessary is to go deep into the basic reasons. For instance, as the Chief Minister of West Bengal has done, to which my hon. friend referred yesterday, which makes us very happy: that he has given preference to the tillers of the soil over the owners of the soil. According to the latest revised rates in West Bengal, the tillers of the soil will be getting 60 per cent share of the produce, even though they may not supply the bullocks or produce the seeds. So, land reform, and a proper and a better organisation for distribution, are the two big factors which can substantially take us ahead towards the objective that we have before us with regard to the increase of food production.

These 88 million tons of food may have been produced or may not have been produced. Even if you are going to import five to six million tons of food, it will not make much differnce. The problem of maldistribution will remain as it is, even if you import food. We have imported food in the past years more or less according to our satisfaction. But still, the prices were always going up. There are some other elements which should go to meet the challenge of this price rise and the scarcity of food. It is not only the lack of techniques which has come in the way, but our inability to follow the policy which has been declared by us.

I will refer to one more point. This is about the joint stock companies, which is the latest thinking of some of us in order to produce better seeds for dissemination. You know that there are thousands of State farms in this country. What are these thousands of State farms doing? And why have they not succeeded? There was no dearth of finance, there was no dearth of technical assistance; there was no dearth of technicians and experts and no dearth of resources. I do not think there is any single unit which processes more power and influence than the unit of Government; if the Government did not succeed in producing better type of seeds, how do we think that a joint stock company, even though managed by a very big indus-

trialist, can do this thing. Are we going to change our policy? If we are going to do this, why have you started by favouring the industrialist? Why do we not start from the revival of the old zamindari system? Let them come; let us trust those people who know these things. A known enemy is easier to deal. Let us go back; I say this cynically; I admit. But I do not see any reason, any wisdom, in handing over our lands to a group of people who have no experience except of profiteering, evading income-tax and importing talents from abroad in order to make personal profit and earn selfish glory. It will be a thousand shame for a Government of this country—whether it is the State Government or the Central Government—if they are unable to produce better seeds from their own State farms, than to hand over the lands to the big peasant proprietors, to individual industrialists or joint stock companies in order to produce seeds. I think it is a wholly erroneous idea. I would warn the Government not to repeat those mistakes. Otherwise, we will not be able to do anything.

Only one word more, and I shall finish. My hon. friend Shri Hanumanthaiya referred to aid with or without strings. It is, I beg to state, wholly irrelevant to the issue before us. He talked of food production on a war footing. This is also a slogan, without understanding. It has been going on for years. If you implement the programme of production on a "war footing", you may have to take over land or you may have to expropriate land; you will have to introduce radical changes and transform your "means" in a big way, which you are not prepared to do; therefore, either we are to follow a socialist programme in a radical way, anticipating the crisis that confronts us, or, we go by this slogan of "food production on a war footing". We have to change ourselves including our thinking in a big way. We hesitate to it and then talk of "aid without strings", "aid with strings" and so on. It is wholly irrelevant. What is necessary is, if we are really serious about the self-reliant spirit which we want to spread, then we have to so adjust our national policy, international policy, as to be in tune with the socialist programme which we have set before us with regard to the ownership of land, ownership of property and management by public institutions. We have to change the whole condition and create a completely new complex of condition before us which will be the starting point for the realisation of all those dreams which we have been seeing from such a long time.

श्री महम्मद चौधरी (सहरसा) : उपाध्यक्ष महोदय, देश में अनाज की दिक्कत है और इस लिए अनाज के उत्पादन को बढ़ाने की जो भी कोशिश आज सम्भव हो, यह करना है, इस में कोई राय नहीं है । मैं सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूं कि इस के सम्बन्ध में जो सीरियसनेस ऊंचे स्तर पर है, वही सीरियसनेस सरकार के निचले स्तर पर भी आना जरूरी है । जो नीचे के स्तर के सरकारी कर्मचारी हैं, उन में भी दक्षता की आवश्यकता है, सीरियसनेस की आवश्यकता है, ताकि सामान समय पर मिल सके और जो पैसे इस काम के लिए दिये जाते हैं, उन का समय पर सही उपयोग हो सके । हमारा अनुभव है कि ब्लाकों में माइनर इरिगेशन के लिए जो पैसे दिये जाते हैं, उन का अधिकांश प्राय: सरेन्डर हुआ करता है, क्योंकि उन के यूटिलाइजेशन के लिए जो कुछ सीरियसनेस चाहिए, वह कहीं दीखती नहीं है । जब तक इन बातों में सुधार नहीं होगा, तब तक केवल ऊपर के स्तर पर सीरियसनेस से काम नहीं चल सकता है ।

मैं मंत्री महोदय का ध्यान मूल्य नियंत्रण और वितरण की नीति की तरफ दिलाना चाहता हूं । मैं ने हाल ही में कुछ आंकड़े कहीं देखे थे और मैं आज सदन में

[श्री तहटन चौधरी]

ये आंकड़े रखना चाहता हूं और मैं चाहता हूं कि कुछ मिनिस्टर इस बात पर विचार करें कि यह स्थिति क्यों पैदा होती है ।

1961-62 का वर्ष रिकार्ड ईयर आफ प्राडक्शन माना जाता है सरकारी आंकड़ों के मुताबिक बताया गया है कि 1962-63 में वह प्राडक्शन बहुत अंश तक गिर गया, लेकिन सरकारी आंकड़ों के मुताबिक 1963-64 में 1961-62 से भी सीरियल्स का उत्पादन ज्यादा हुआ । जहां तक 1962-63 का सवाल है, 1963-64 में उस से ढाई मिलियन टन ज्यादा सीरियल्स की उपज हुई, यानी 1963-64 में 1962-63 से 4 प्रतिशत अधिक उपज हुई । जहां तक आयात का सवाल है, बाहर से आयात किये गए अनाज में 1963 की तुलना में 1964 में 38 परसेंट की वृद्धि हुई । मैं मानता हूं कि होल प्राडक्शन पर 38 परसेंट का इम्पैक्ट नहीं पड़ेगा, लेकिन जो भी इम्पैक्ट पड़े, यह बात सच है कि 38 परसेंट ज्यादा अनाज मंगाया गया । लेकिन प्राइस इन्डेक्स बिल्कुल विपरीत दिशा में गया है । प्राइस इन्डेक्स 1963 में 112 था और 1964 में वह 134 हो गया । हम यह उम्मीद कर सकते थे कि जब सरकारी आंकड़ों के मुताबिक अनाज आयात ज्यादा हुआ और अनाज की उपज ज्यादा हुई, तो प्राइस इन्डैक्स घटना चाहिए था, या कम से कम उस जगह पर रहना चाहिए था, जहां वह 1963 में था, लेकिन उल्टे वह 20 परसेंट ज्यादा चला गया, यह क्यों ? मुझे याद है कि जो 1965 में सरकारी वक्तव्य हुआ था उपज के बारे में तो कहा गया था कि सन् 1961-62 के रेकार्ड इयर से ज्यादा होने की सम्भावना है । मैं कहना चाहता हूं कि कितने ही उस के आंकड़े क्यों न आये हों लेकिन सन् 1965 के सितम्बर का जो प्राइस इंडेक्स है वह 143 चला गया था यानी सन् 1964 से 30 परसेन्ट ज्यादा । मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसा क्यों हुआ है । इस के दो ही कारण हो सकते हैं । या तो आंकड़ों का सिलसिला गलत है और हम गलत आंकड़ों पर कहीं पहुंचते हैं या तो यह मानना पड़ेगा कि होर्डिंग है, ब्लैक मार्केट है और सरकारी नीतियों में कहीं न कहीं गलतियां हैं वितरण के सिलसिले में और कंट्रोल के सिलसिले में जिस के कारण इस तरह की स्थिति पैदा होती है ।

मैं समझता हूं कि बहुत अंश तक हमारी नीति भी इस मामले में दखल देती है और इस के लिये वही जिम्मेदार है । उदाहरण के तौर पर मैं कहना चाहता हूं कि प्राइस सपोर्ट एक अच्छी चीज है और आवश्यकता है इस बात की कि किसानों को प्राइस सपोर्ट दिया जाये ताकि उसे इन्सेन्टिव मिले । इस में कोई शक की बात नहीं है । लेकिन मेरी मान्यता है कि सरकार ने उस वक्त प्राइस सपोर्ट की पालिसी शुरू की सन् 1964 में जब कि टेन्डेन्सी प्राइज राइज की थी । इस का नतीजा यह हुआ कि सन् 1965 के शुरू से ही जो प्राइस लेवल प्राइस सपोर्ट का तय किया था उसे नहीं रखा । उसे उसने छुआ ही नहीं, बहुत आगे आगे भागता गया । जब टेन्डेन्सी प्राइस नीचे गिरने की हो तब हम प्राइस सपोर्ट कर सकते हैं, लेकिन जब टेन्डेन्सी बढ़ने की हो और मूल्य ऊंचे हो रहे हों तब प्राइस निश्चित करते हुए हमारे लिये जरूरी होता है कि हम मक्सिमम प्राइस तय करें और उस पर अमल करें । सरकार ने उसे किया लेकिन हार मान ली, उस पर अमल नहीं किया । नतीजा यह हुआ कि देश को इस तरह का आभास मिला कि प्राइस ज्यादा बढ़ेंगी, कमी है देश में सारी चीजों की और इस लिये

सरकार ने मिनिमम प्राइस ठीक किया, मै:सिमम प्राइज लेवल सरकार ने छोड़ दिया इतना ही नहीं हुआ, जो सरकारी अनाज की सप्लाई होती थी उस के भाव भी बढ़ाये गये फेअर प्राइस शाप्स में। इस तरह से पैसे की बचत हुई लेकिन देश की मनोवृति क्या हुई। देश ने समझा कि सचमुच ही बड़ी मुसीबत आने वाली है क्योंकि देश की सरकार ने प्राइस को बढ़ाया है। नतीजा जो हुआ वह आप ने देख लिया कि प्राइस बढ़ती चली जा रही हैं।

एक बात और भी हुई जो कि दिल को चोट पहुंचाने वाली है। सरकार की नीति है कि बड़ी मिल्स या राइस हस्किंग मिल्स को चलाने की इजाजत सब जगह दी जाय, शहरों में भी और देहातों में भी। लेकिन जो छोटे हलर्स हैं उन पर हम ने रुकावट डाल दी। जो हलर्स छोटे हलिंग वाले होते हैं उन की इतनी कपैसिटी नहीं होती कि वह होर्ड कर सकें। वह दिन भर अपने अनाज की हलिंग करते हैं और शाम को उसे बेच देते हैं क्योंकि अगले दिन के लिये उन को कैपिटल चाहिये। लेकिन बड़े मिल वाले जो होर्ड कर सकते हैं, जो हम से छिपा कर रख सकते हैं उन्हें आप ने इजाजत दी कि वह अपनी मिल चलायें। छोटे हलर्स को हम ने बन्द किया। मैं मानता हूं कि इन दोनों तीनों चीजों ने एक कारण का रूप लिया है इस अनाज के भाव बढ़ने में। मैं आग्रह करूंगा कि हम को इस नीति पर गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिये।

इस सम्बन्ध में दो ही तरीके हो सकते हैं। या तो हम मैक्सिमम प्राइस तय करें और कह दें कि इस से ज्यादा हम नहीं चलने देंगे चाहे जो भी करना पड़े। लेकिन हम लोगों में यह हिम्मत नहीं है, या हम समझें कि हम इस को नहीं चला सकते है तो फिर दूसरा तरीका है कि हम अपना बफर स्टाक कायम करें जिस से हम बाजार को कन्ट्रोल करें। लेकिन जो तरीका बफर स्टाक का चल रहा है उस से काम नहीं चलेगा। इस में काफी गलतियां हो रही हैं। मैं इस के डिटल में नहीं जाना चाहता, लेकिन मैं ने कई स्टट्स में देखा ह कि उन्होंने जो नीति अख्त्यार की है उस से काफी अनाज नहीं आ सकता है। मैं इस के भी उदाहरण दे सकता हूं। आज भी देहातों के बीच में दो बातें चल रही हैं। एक तरफ तो बड़े बड़े पूंजीपति, बड़े बड़े व्यापारी काफी भाव पर अनाज खरीद रहे हैं और आप ने छूट दी है कि जो जिस भाव पर चाहे खरीदे, दूसरी तरफ आप लेवी करते है कि इस भाव पर हमें दो। यह दोनों चीजें साथ साथ चलने वाली नही हैं, और अगर यह चलेंगी भी तो बहुत सीमित अंश में। आप का उद्देश्य कभी भी इस तरह से पूरा नहीं हो सकता है। इसके साथ ही हम देखते हैं कि जो गरीब लोग है, जिन के पास दो बीघा या चार बीघा धान है वह अपने धान को 12 रु० मन या 13 रु० मन के हिसाब से एडवान्स पर बचते चले जा रहे हैं। उन्हें पूंजीपति लोग थोड़े पैसे देते हैं पेशगी के तौर पर और सारा धान खरीद लेते हैं। सरकार एसा नहीं करती। न तो वह पेशगी दे कर धान खरीदने की कोशिश कर सकती है और न मैक्सिमम प्राइस दे कर दूसरा आदमी न खरीद सके ऐसा कायदा रख कर लेवी कर सकती है। दोनों में से कोई चीज नहीं हो रही है। मैं कहना चाहता हूं कि अगर आप को अपना बफर स्टाक बढ़ाना है तो आप को यह स्पष्ट करना चाहिये कि या तो आप ओपन मार्केट में जाइये या फिर जो आप ने लेवी रखी है उसको पूरा कीजिये लेकिन रीजनेबल ढंग से कीजिये, दूसरों को खरीदने से रोकिये। अगर आप उन को नहीं रोकियेगा तो आप को कुछ मिलने वाला नहीं है।

इसके साथ ही साथ आप को एक और कोशिश करनी चाहिये। आप के पास

[श्री लहटन चौधरी]

बहुत बड़ी सेना है बी० डी० ओज० की और दूसरे लोगों की । आप उन को काम पर लगा दीजिये । लोगों को एडवान्स दीजिये स्टेन्डिंग क्राप्स के अगेन्स्ट में छोटे किसानों को और समय पर धान वसूल करने की कोशिश कीजिये । अगर आप ऐसा करेंगे तो मैं समझता हूं कि आप बहुत बड़ा बफर स्टाक कायम कर सकेंगे । इन शब्दों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करता हूं ।

Dr. L. M. Singhvi: Sir, while we are glad for the speech that the hon. Member made, what intrigues us is the invisible way of the presiding eye, now the hon. Member sitting behind the pillar was able to catch your eye. I am not objecting to it.

श्री लू० ला० वर्मा (सीतापुर) : उपाध्यक्ष महोदय, हमारी सरकार कृषि के मामले में बिल्कुल फेल हो चुकी है । सरकार ने केवल कागजी घोड़े ही दौड़ाये हैं और कभी भी इस समस्या पर ठीक से विचार नहीं किया । आज भी हमारी सरकार यह कहती है कि सिंचाई का प्रबन्ध किया जायेगा और बड़े बड़े तालाब और कुंएं आदि खोदे जा रहे हैं । लेकिन सरकार की मशीनरी इसका सारा रुपया खा कर बैठ गई है । ऐसी हालत में मैं यह मानने के लिये तैयार नहीं हूं कि सरकार का इरादा बिल्कुल सही तौर से खर्च करने का है ।

जब अभी हाल में भारत ने पाकिस्तान से लड़ाई लड़ी थी तो उस के दरम्यान में अमरीका ने भारत को धमकि दी थी । कि अगर भारत पाकिस्तान से लड़ाई करेगा तो वह फौरन भारत से अलग हो जायेगा और यहां तक कह डाला कि हम गेहूं नहीं देंगे । इसलिए सारा भारत भूखों मर सकता है । ऐसी हालत में हमारे देश की जनता ने यह निश्चय किया कि हम एक दाना भी अमेरिका से लेने के लिए तैयार नहीं हैं बल्कि यहां तक तय किया कि हम उधर देखने को भी तैयार नहीं है जबकि हमारी सरकार ने जनता के साथ धोखा किया है और अमेरिका के सामने हाथ फैलाया । अमरीकी सरकार के अधिकारियों ने यह कहा कि हमारी एक शर्त है । यह शर्त अगर आप मानें तो हम गेहूं देने के लिए फौरन तैयार हैं । हमारे खाद्य मंत्री वह शर्त मानने के लिए तैयार हो गये हैं । ऐसी हालत में जबकि अमेरिका यह जानता है कि भारत अब अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है और खड़ा होगा । उसमें यह शर्त रखी गई है कि भारतीय जो योजना है वह अमेरिका के योजना आयोग के सामने लायी जाय, इसकी वह जांच करे, ऐसा बताया जाता है । हमें डर है कि कहीं ऐसा है कि हमारे खाद्य मंत्री महोदय ने यह बात मान ली । अब हमें इस बात के लिए भय है कि अमेरिका हमारे देश को बंजर न बना दे जिससे देश की हालत और बिगड़ जाय और दूसरे देशों के सामने हाथ फैलाना पड़े । इससे देश तबाह हो सकता है जैसे कि एक भेड़िये को बकरी सौंपना हो जाय । मैं यह नहीं चाहता और मैं खाद्य मंत्री जी से और प्रधान मंत्री जी से निवेदन करूंगा कि वह यह बात न मानें ।

दूसरी बात यह है कि हमारे देश में खास तौर से तीन चीजों की बड़ी कमी है जो आज तक सरकार पूरी नहीं कर पायी है । एक तो है बेरोजगारी, दूसरी है गल्ले की कमी और तीसरी है सेना, सेना की भी कमी है । ऐसा है कि हमारे देश की जनसंख्या बहुत बढ़ती जा रही है और किसान जो खेतिहर किसान है जो अपने हाथ से खेती करते हैं उनकी संख्या बहुत ही कम होती जा रही है । इसका मतलब यह है कि देश के सभी किसान और मजदूरों के बच्चे, हर आदमी के बच्चे स्कूलों में पढ़ने जाते हैं और वहां खास तौर से किसान के बच्चे 70 फीसदी, ज्यादा पढ़ नहीं पाते, आठवीं नवीं, दसवीं फेल होकर बैठ जाते हैं और वे कुछ नेतागीरी के चक्कर में पड़ते हैं और कुछ दफ्तरों और आफिसों के चक्कर लगाने

लग जाते हैं कि उन्हें कहीं नौकरी मिल जाय। ऐसी हालत में नौकरी तो मिल नहीं पाती क्योंकि वह पढ़े लिखे नहीं हैं। इसलिए वह अपने घर की भी पूंजी खत्म करके बिलकुल बेकार हो जाते हैं। ऐसी दशा में मैं सरकार को यह बताना चाहता हूं कि हिन्दुस्तान के अन्दर प्रान्तों में तथा जिलों में जो ग्राम समाज की सकड़ों क्या हजारों एकड़ जमीन बेकार पड़ी हुई है, बंजर पड़ी हुई है, उनको खेती के काम में लाये और उसके लिए एक योजना बनावे जिसमें कि वह किसान के नवजवान बच्चे, मजदूर के बच्चे, उनको लाकर उनसे खेती करायी जाय, उनको सेना की ट्रेनिंग दी जाय। वह ट्रेन्ड होंगे तो हमारे देश की रक्षा करेंगे। खाद्य की स्थिति भी इससे सम्हलेगी और बेकारी भी दूर हो सकती है। इसलिए मेरा सरकार से नम्र निवेदन है कि वह खास तौर से इस पर गौर करे। हमारे देश में अभी तक सरकार ने न अच्छे बीज का इन्तजाम किया है और न समय पर पानी देती है। बल्कि पानी की बड़ी ही कमी है। खाद की समस्या है। खाद भी नहीं दे पाते। अभी हाल में पिछले वर्षों फसल बहुत ही अच्छी हुई थी। गेहूं बहुत अच्छा हुआ। लेकिन बीज की खास तौर से देखभाल न करने के कारण हमारे उत्तर प्रदेश में पंजाब का बीज दिया गया जिसकी देखभाल नहीं की गई। जो बीज दिया गया उसका उत्पादन किया गया। गेहूं की फसल बड़ी अच्छी हुई। लेकिन उसमें जब गेहूं की बाली निकली तो बालियों के अन्दर एक महीन महीन से छोटे छोटे से दाने काले रंग के पैदा हुए जिनको हमारे यहां जहर कहा जाता था। मैंने वह बालियों सहित लाकर के प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के सामने पेश की थी और उन से प्रार्थना की थी कि यह बालियां आप जांच के लिए भेज दें। हमारे यहां के लोग इसको जहर कहते हैं। उसमें मुझे पता नहीं क्या हुआ।

पानी की खास समस्या है। पानी समय पर नहीं मिल पाता और खड़ी फसलें, तैयार फसलें, बगर पानी के सूख जाती हैं। जहां पर पानी है वहां भी पानी नहीं मिल पाता। सरकार की मशीनरी बिलकुल फेल हो चुकी है। मैं सरकार से यह पूछना चाहता हूं और खास तौर से खाद्य मंत्री महोदय से कि सरकार की कौन सी ऐसी मशीनरी है जो कि सही ढंग से काम कर रही है?

तीसरी बात यह है कि खाद भी नहीं मिल पाती। खाद ब्लाक से मिलती है और ग्राम प्रधान के रेकमेंडशन के ऊपर मिलती है। हर आदमी को पता है कि गांव गांव में आज खास तौर से पार्टीबन्दी है। इसलिए पार्टीबन्दी या दुश्मनी के कारण या पैसे के लालच से खाद भी किसान को सही ढंग से नहीं मिल पाती।

हमारे उत्तर प्रदेश में हमारी सरकार ने खेती बढ़ाने के लिए या यों समझ लीजिये कि किसानों को नेस्तनाबूद करने के लिए लगान बढ़ाया है और सरकार अपनी मशीनरी पर काबू नहीं पा रही है। लगान बढ़ा कर गल्ला अधिक उपजाओ योजना ऐसे वक्त पर नहीं चल सकती। यह लगान बढ़ा कर किसानों की आत्महत्या करना है। जबकि ऐसे संकट के समय में, ऐसे गिरानी के समय में हर चीज के बड़े ऊंचे दाम चढ़ते जा रहे हैं और सरकार उनको रोकने में असफल हो चुकी है तो ऐसी हालत में यह लगान बढ़ाना अनुचित होगा। जब हम यहां यह बात लाते हैं तो हमारी सरकार यही कहती है कि यह राज्य सरकारों का काम है, यहां से केन्द्र से कुछ नहीं हो सकता। मैं सरकार से यह कहना चाहता हूं कि ऐसे समय में जब यह प्रश्न आता है तो वह भागने की कोशिश करती है, सरकार को चाहिए कि वह राज्य सरकारों को इस बात के लिए बाध्य करे और हिदायत करे कि वह ऐसे संकट के समय में टैक्स या लगान कतई न बढ़ाये और वसूली न करे। अभी हाल में मैंने उत्तर प्रदेश में देखा है कि धान पर 60 प्रतिशत गवर्नमेंट ने मांग की है

[श्री सहटन चौधरी]

और 60 प्रतिशत लेने के लिए भी कानून बनाया है । लेकिन मैं देखता हूं कि ब्लैक मार्केटिंग करने वाले ही सब धान उठाकर रातों रात चावल बनाकर इधर उधर बिहार साहब में और बाहर भी इस तरह से भेज देते हैं लेकिन वहां सरकार की मशीनरी उनको पकड़ने में बिलकुल असमर्थ हो चुकी है । ऐसी हालत में मैं सरकार से यह प्रार्थना करूंगा और कहूंगा कि इन बातों पर थोड़ा विचार करे जिससे कि हमारे देश की खाद्य स्थिति, सेना की कमी और गरीबी दूर हो सके । यही मुझे कहना है ।

श्री हुकम चन्द कछवाय : उपाध्यक्ष महोदय, मैं निवेदन करना चाहता हूं कि यह खाद्य समस्या इतने महत्व का विषय है कि इसको ध्यान में रखते हुए इस पर एक घंटा समय और बढ़ा दें । एक घंटे तक हम और बैठेंगे . . . (व्यवधान) मैं प्रस्ताव रखता हूं कि 1 घंटा समय बढ़ा दिया जाय ।

Mr. Deputy-Speaker: Now, we shall have to take up the half-an-hour discussion. If the Members are here and keep the quorum, we can sit for one hour more after the half-an-hour discussion is over.

Shri C. Subramaniam: I would like to submit that there is a Cabinet meeting today which I have to attend.

Shri A. P. Sharma: We are prepared to sit late. We want that more time should be given. We have approached the Speaker in a joint petition for the allotment of more time. We have also approached the Minister of Parliamentary Affairs. We are prepared to sit late, because the problem is so serious. If still you do not extend the time, we cannot understand.

Mr. Deputy-Speaker: The Food Minister has a Cabinet meeting to attend. If the House does not insist upon the presence of the Food Minister and his Deputy can remain here, we can continue for one hour more after 5.30 p.m.

Some hon. Members: Yes.

Shri Sonavane: This extra one hour may not be counted in the 18 hours allotted.

Mr. Deputy-Speaker: It will be counted.

---

17 hrs.

KERALA CULTIVATORS*

Shri Vasudevan Nair (Ambalapuzha): I have sought to raise this half-hour discussion on certain points arising out of a question on 24 November regarding the sorrowful plight of a few hundred families resettled in a place far away from their original place of residence. They are peasant families. The hon. Minister gave me a reply as follows:

> "Government have received representations from the settlers pointing out their difficulties and asking for further concessions.
>
> Proposals to give more bamboos and cadjan leaves, free supply of banana suckers, vegetable seeds etc. are under consideration of Government".

Through this half-hour discussion, I would like to highlight the tragic and sorrowful story of a few hundreds of our cultivator families in Kerala State. It has a background. I do not wish to take much time to elaborate all the details as far as the background is concerned. But I may briefly point out that this is not just a question of a few hundred families who are immediately involved. As a

*Half-An-Hour Discussion.